Fortnightly per copy Rs. 5/- only

ओ३म्

18th February 2016

आर्य जीवन
ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प
హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month

आर्य प्रतिनिधि सभा आँ.प्र.- तेलंगाना के तत्वावधान में

पद्मश्री से पुरस्कृत डॉ. टी.वी. नारायण जी का सम्मान समारोह

दिनांक 28-02-2016 रविवार सायं 4.00 बजे से
स्थान :- पण्डित नरेन्द्र भवन, राजमोहल्ला, हैदराबाद

निमंत्रण

आर्य समाज के वरिष्ठतम् नेता, आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व प्रधान तथा वर्तमान में वरिष्ठ उपप्रधान डॉ. टी.वी. नारायणजी को भारत सरकार ने पद्मश्री के सम्मान से नवाज़ने का फैसला कर गणतन्त्र दिवस के सन्दर्भ में घोषणा की है । तेलंगाना प्रांत से सामाजिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में गत सात दशाब्दियों से निरंतर सेवा करने के उपलक्ष में पद्मश्री पुरस्कार से डॉ. टी.वी.नारायणजी को सम्मानित किया जा रहा है । इस संदर्भ में आर्य समाज अपने आप को गौरवान्वित महसूस करता है और आर्य प्रतिनिधि सभा ने इनकी विशिष्ट सेवाओं के उपलक्ष में प्रतिनिधि सभा की ओर से उन्हें सम्मानित करने का निश्चय किया है । सम्मान समारोह दिनांक **28-2-2016** रविवार के दिन सायंकाल **4.00** बजे से पंडित नरेन्द्र भवन में आयोजित है अपनी-अपनी समाजों से अधिक से अधिक संख्या में भाग लेकर सम्मान समारोह को सफल बनाने में अपना योगदान दें ।

सम्मान ग्रहीता : पद्मश्री डॉ. टी.वी. नारायणजी

अध्यक्षता : श्री विट्ठल राव आर्य, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र.-तेलंगाना

मुख्य अतिथि : मान्यश्री कड़ियम श्रीहरीजी उप मुख्यमंत्री, तेलंगाना
मान्यश्री महमूद अलीजी उप मुख्यमंत्री, तेलंगाना राज्य
मान्यश्री नायनी नरसिंहा रेड्डीजी, गृहमंत्री, तेलंगाना
मान्यश्री बंडारु दत्तात्रेयजी, केन्द्रीय मंत्री भारत सरकार

संयोजन : श्री हरिकिशनजी वेदालंकार, मंत्री सभा

आप सभी से निवेदन है कि प्रान्त की समस्त आर्य समाजें, समस्त आर्य जन, सभी सदस्य एवं विशेष आमंत्रित सदस्य अधिक से अधिक संख्या में भाग लेकर सम्मान समारोह को सफल बनाने में अपना योगदान दें

हरिकिशन वेदालंकार
मंत्री सभा
मोबाईल : 09703066001

विट्ठलराव आर्य
प्रधान सभा
मोबाईल : 09849560691

ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ ఆధ్వర్యములో

పద్మశ్రీ అవార్డు గ్రహీత డా॥ టి.వి. నారాయణ గారి సన్మాన సభ

తేది : 28-02-2016 ఆదివారము సాయంత్రము 4.00 గం॥ల నుండి
స్థలము :- పండిత నరేంద్ర భవనము, రాజమొహల్ల, హైదరాబాద్.

ఆహ్వానము

ఆర్య సమాజ ప్రముఖ నాయకులు, ఆర్య ప్రతినిధి సభ పూర్వ అధ్యక్షులు ప్రస్తుత వరిష్ఠ ఉప ప్రధానులైన డా॥ టి.వి. నారాయణ గారికి భారత ప్రభుత్వము పద్మశ్రీ అవార్డును గణతంత్ర దినమున ప్రకటించినది. తెలంగాణ ప్రాంతము నందు సామాజిక మరియు ఆధ్యాత్మిక క్షేత్రములో గత ఏడు దశాబ్దాలుగా నిరంతరము వారు చేసిన సేవలను గుర్తించి భారత ప్రభుత్వము పద్మశ్రీ అవార్డును ప్రదానం చేసింది. ఈ సందర్భమున వారి సన్మానాన్ని ఆర్య సమాజము తన గౌరవంగా భావిస్తూ డా॥ టి.వి. నారాయణ గారిని సన్మానించ నిశ్చయించినది. తేది 28-2-2016 ఆదివారము సాయంత్రము 4.00 గం॥లకు పండిత నరేంద్ర భవనములో సన్మాన సభ ఏర్పాటు చేయనైనది.

సన్మాన గ్రహీత : **పద్మశ్రీ డా॥ టి.వి. నారాయణ గారులీ**

అధ్యక్షులు : **శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య గారు**
ప్రధాన్, ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ.

ముఖ్య అతిథులు : **మాన్యులు శ్రీ కడియం శ్రీహరి గారు**
ఉపముఖ్యమంత్రి తెలంగాణ రాష్ట్రము.
మాన్యులు శ్రీ మహమూద్ అలి గారు
ఉపముఖ్యమంత్రి తెలంగాణ రాష్ట్రము.
మాన్యులు శ్రీ నాయిని నరసింహా రెడ్డి గారు
హోంశాఖామాత్యులు తెలంగాణ రాష్ట్రము.
మాన్యులు శ్రీ బండారు దత్తాత్రేయ గారు
కేంద్ర మంత్రులు భారత ప్రభుత్వము

సంయోజకులు :- **శ్రీ హరికిషన్ వేదాలంకార్**, మంత్రి సభ

తెలంగాణ మరియు ఆంధ్రరాష్ట్రాలలోని ఆర్యసమాజికులు అధిక సంఖ్యలో పాల్గొని కార్యక్రమమును జయప్రదము జేయగలరని మనవి.

ధన్యవాదములు.
భవదీయులు

హరికిషన్ వేదాలంకార్
మంత్రి సభ
సెల్ : 09703066001

విఠల్ రావు ఆర్య
ప్రధాన్ సభ
సెల్ : 09849560691

People are forced to work as bonded labourers on their own and for generations since last 20-25 years and moneylenders were recovering interests from them at the rate of 15-20%

हमारा मकसद हंगामा खड़ा करना नहीं है
हमारा मकसद है की यह सूरत बदलनी चाहिये

NIIT कुरुक्षेत्र परिसर में वृक्षारोपण करते हुए हिमाचल के राज्यपाल महामहिम देवव्रतजी आचार्य

'महर्षि दयानन्द का प्रो. मैक्समूलर पर चमत्कारिक प्रभाव'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

प्रोफेसर मैक्समूल जर्मनी में जन्में इंग्लैण्ड के निवासी और संस्कष्त के जानकार विद्वान थे। अंग्रेजों ने भारत में अपने ब्रिटिश राज्य व ईसाईयत की गहरी जड़े जमाने के लिए उनका उपयोग किया था। उन्हें आर्थिक प्रलोभन व सहायता का प्रस्ताव किया गया था जब कि उन्हें इसकी अत्यन्त आवश्यकता थी। वह ईसाई मत के अनुयायी थे अतः ईसाईयत की सेवा करना उनका कर्तव्य कहा जा सकता है। अतः विवशता और अपने मत की सेवा के लिए उन्हें वेदों के मिथ्या व विद्रूप अर्थ करने का कार्य करना पड़ा। उन्होंने यह कार्य इसलिए भी किया था क्योंकि वह कोई बहुत बड़े वैदिक विद्वान, ऋषि व योगी नहीं थे जो अपनी आत्मा व सत्य के विरुद्ध आचरण नहीं करता। उनकी दूसरी विवशता आर्थिक थी। अतः उन्होंने भारत में शासन कर रहे अंग्रेजों का प्रस्ताव स्वीकार कर उसे पूरा किया। अपने इसी कार्य के अन्तर्गत उन्होंने जहां आक्सफोर्ड में कार्यरत रहते हुए भारत आने वाले अंग्रेज अधिकारियों को भारत के प्राचीन धर्म व संस्कषति के विरोधी व्याख्यान दिये वहीं चारों वेदों का अंग्रेजी में आप्रमाणिक भ्रान्तिपूर्ण भाष्य व अनुवाद कर उसे सरकारी सहायता से प्रकाशित कराया था।

प्रो. मैक्समूलर पर महर्षि दयानन्द के विचारों का प्रभाव उनकी चारों वेदों की भूमिका के रूप में लिखे गये प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका' के द्वारा हुआ। यह ग्रन्थ मासिक रूप से क्रमानुसार प्रकाशित होता था जिसे मैक्समूलर के इंग्लैण्ड के पते पर भेजा जाता था। महर्षि दयानन्द द्वारा इस ग्रन्थ का प्रणयन अगस्त, 1876 में आरम्भ किया गया था। वैदिक विद्वान स्वामी विद्यानन्द सरस्वती अपनी भूमिका भास्कर ग्रन्थ के परिशिष्ट में लिखते हैं कि यद्यपि मैक्समूलर प्रत्यक्षतः भारत में नहीं आ सके, परन्तु अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में वे भारत व भारतीयता के प्रशंसक रहे। यह उनके 'India : What can it teach us?' (भारत से हम क्या सीखें?) में व्यक्त विचारों से स्पष्ट है। आक्सफोर्ड में रहते हुए अपने प्रारम्भिक वर्षों में उनके लिए अपने अन्नदाताओं को सन्तुष्ट रखना आवश्यक था। इसलिए उस अवधि में उन्होंने जो कुछ लिखा वह उनकी उस समय की स्थिति का परिणाम था। बाद में उनके विचारों में जो परिवर्तन आया, उसके दो कारण थे–

1–अपनी अन्तरात्मा का विद्रोह–प्रो. मैक्समूलर की आर्थिक विपन्नता के कारण अपनी आत्मा का सौदा करके लार्ड मैकाले की दासता स्वीकार करने को बाध्य होना पड़ा था। इस आत्म समर्पण के कारण उसकी आत्मा उसे सदा कचोटती रही। इसलिए जैसे ही उसे इस स्थिति से उबरने का अवसर मिला, वैसे ही उसका मन विद्रोह कर उठा और भीतर की बातें बाहर आने लगी।

2–ऋषि दयानन्द की मान्यताओं से परिचय–मैक्समूलर ने लिखा है "भारतीय वांग्मय की प्राचीनतम कषति ऋग्वेद के दो संस्करण मासिक रूप में प्रकाशित हो रहे हैं–एक बम्बई से और दूसरा प्रयाग (इलाहाबाद) से। पहले में मूल संस्कष्त टीका तथा उसका मराठी और अंग्रेजी में अनुवाद रहता है और दूसरे में संस्कष्त में विस्तष्त व्याख्या तथा हिन्दी में उसका अनुवाद रहता है। ये ग्रन्थ ग्राहकों के चन्दे से प्रकाशित हो रहे हैं। ग्राहकों की संख्या पर्याप्त है।" (Of the Rigveda, the most ancient of Sanskrit books, two editions are now coming out in monthly numbers. The one published at Bombay by what may be called the liberal party. The other at Prayag (Allahabad) by Dayanand Saraswati, the representative of Indian orthodoxy. The former gives a paraphrase in Sanskrit and Marathi and English translation, the latter a full explanation in Sanskrit, followed by a vernacular (Hindi) commentary. These books are published by subscription and the list of subscribers among the natives of India is very considerable—India : What can it teach us)

प्रोफेसर मैक्समूलर स्वामी दयानन्द द्वारा प्रयाग से मासिक रूप में प्रकाशित हो रहे ऋग्वेदभाष्य के नियमित ग्राहक थे और उनका नाम मुखपष्ठ पर प्रकाशित ग्राहकों की सूची में शामिल था। स्वामीजी कष्त ऋग्वेदभाष्य को पढ़कर मैक्समूलर की आंखे खुली और उसके विचार पलटा खाने लगे। सन् 1882 में कैम्ब्रिज में मैक्समूलर के कुछ व्याख्यान हुए जो सन् 1883 में 'India: What can it teach us?' नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए। इन व्याख्यानों में स्वामी दयानन्द, वेद और भारत के सम्बन्ध में मैक्समूलर का स्वर बदला हुआ था। कभी मैक्समूलर ने स्वामी दयानन्द के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा था–"स्वामी दयानन्द ने ऋग्वेद का संस्कष्त में भाष्य किया है, पर उनके समूचे साहित्य में ऐसा कुछ नहीं है जिसे मौलिक कहा जा सके, सिवा इसके कि उन्होंने वैदिक शब्दों और वाक्यों के कुछ विचित्र अर्थ किये हैं।" ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पढ़ने के बाद मैक्समूलर ने इस महान् ग्रन्थ को संस्कष्त साहित्य के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हुए स्वामी दयानन्द और उनकी कषति का इन शब्दों में स्तवन किया –'सम्पूर्ण

संस्कष्त साहित्य को हम ऋग्वेद से आरम्भ करके दयानन्द की 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका तक दो भागों में बांट सकते हैं।' (We may divide the whole of Sanskrit literature, beginning with the Rigveda and ending with Dayananda's Introduction to his commentary of the Rigveda, into two parts.—India : What can it teach us, P.102) इस प्रकार मैक्समूलर ने जहां संस्कष्त साहित्य के एक ध्रुव पर ऋग्वेद को रक्खा वहां दूसरे ध्रुव पर दयानन्द की ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका को प्रतिष्ठित किया।

सन् 1866 में मैक्समूलर ने 'चिप्स फाम ए जर्मन वर्कशाप', संस्करण 1866, पष्ठ 27 पर प्रकाशित किया था—''वैदिक सूक्तों की एक बहुत बड़ी संख्या बिल्कुल बचकानी, जटिल, निकष्ट और साधारण है। उनमें न परस्पर संगति है और न सुलझे हुए अर्थों की स्थापना। वेद धार्मिक विश्वासों के विजड़ित पोथे हैं जिनका अधिकांश भाग बुद्धिगम्य नहीं है। मानवजाति के सीखतड़ बच्चे जिस आश्चर्य से जगत को देखते हैं, उसी की छाया मन्त्रों में है।'' उन्हीं मैक्समूलर ने सन् 1882 में लिखा—''वेद में जैसी भाषा पाई जाती है, उसमें जैसा जीवन दर्शन है और जैसे धर्म का वर्णन होता है, उनमें जो दष्यावली दर्षष्टिगत होती है, वर्षों में तो कोई उसकी दूरी नाप नहीं सकता। वेद में ऐसी भावनाओं का प्रकाश हुआ है जो हम यूरोपियनों को उन्नीसवीं शती में आधुनिक प्रतीत होती है। उससे अधिक प्राचीन साहित्यिक कषति का हमें नाम भी सुनने को नहीं मिला। मानव विचार धारा के इतिहास के विषय में जो महत्वपूर्ण जानकारी हमें वेद से मिलती है वह वेदों की खोज से पूर्व हमारी कल्पना से भी परे थी।'' (हम भारत से क्या सीख सकते हैं? पष्ठ 130)

सन् 1868 में मैक्समूलर ने अपने पुत्र को लिखे पत्र में वेदों का इन तिरस्कारपूर्ण शब्दों में अवमूल्यन किया था—''संसार की सब पुस्तकों में नया अहदनामा (Bible or New Testament), सर्वोत्कृष्ट है। इसके पश्चात् कुरान को, जो एक प्रकार से बाइबल का रूपान्तर है, रक्खा जा सकता है। तत्पश्चात् पुराना अहदनामा (Old Testament), बौद्ध त्रिपिटक, वेद और अवेस्ता है।'' बाद में सन् 1883 में मैक्समूलर ने इन शब्दों में वेद का प्रशस्तिगान किया—''यदि हम उस स्रोत को जानना चाहते हैं जो मनुष्य के चरित्र का निर्माता है, विचारों का प्रेरक एवं कार्यों का नियन्ता है, जो भारत के निम्नतम वर्गीय से लेकर उच्चतम वर्गीय व्यक्ति को प्रभावित एवं अनुप्राणित करता है तो हमें भारतीयों के धर्म से परिचित होना चाहिए जिसकी भित्ती वेद की आधार शिला पर है।'' सन्दर्भ—हम भारत से क्या सीख सकते हैं, पृष्ठ 228 ''यदि किसी को मानव जाति का अध्ययन करना हो, या आप चाहें तो यूं कह सकते हैं कि यदि किसी को आर्य जीवन के विषय में अध्ययन करना हो तो उसके लिए वैदिक साहित्य का अध्ययन ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण होगा। संसार का कोई भी साहित्य इस क्षेत्र में वैदिक साहित्य की तुलना में ठहर नहीं सकता।'' वही, पष्ठ 124

''भारतीयों के इतिहास, धर्म, दर्शन, कानून इत्यादि को समझने के लिए, यह अनिवार्य है कि उनका अध्ययन वेद से हो। बिना वेद के आधार के हिन्दू धर्म का पूंर्ण ज्ञान असम्भव है।'' (No one will ever understand the religious, philosophical, legal and social opinions of the Hindus who is unable to trace them back to their true sources in the Vedas-India 126)

''लोगों ने वेद की महत्ता को कम करने के प्रयत्न कम नहीं किये, पर उसका महत्व आज भी वैसा ही है। आज भी धार्मिक, सामाजिक या दार्शनिक विवादों में वेद को ही अन्तिम प्रमाण माना जाता है।''—वही, 227

इसी सन्दर्भ में संस्कष्त की महत्ता पर अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा— ''संस्कष्त साहित्य में ऐसा क्या मिलेगा जो विश्व के अन्य साहित्यों में नहीं मिलता। इस प्रश्न के उत्तर में मेरा कथन है कि संस्कष्त साहित्य में हमें वास्तविक आर्य के दर्शन होते हैं। इन आर्यों को हम यूनानी, ईरानी, रोमन, teZu कैल्ट तथा स्लाव लोगों के रूपों में देख चुके हैं। परन्तु जिस आर्य का पता हमें संस्कष्त साहित्य में मिलता है, उसका व्यक्तित्व इन सबसे निराला है।''——वही, 108

लेख की सीमा को देखते हुए हम अनेकों महत्वपूर्ण उद्धरणों को छोड़ते हुए केवल एक उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। इन पंक्तियों में प्रो. मैक्समूलर ने जो लिखा है उसके लिए उनके हाथों को चूमने की इच्छा होती है। वह लिखते हैं कि 'यह निश्चित है कि हम सब पूर्व से ही आये हैं। इतना ही नहीं, हमारे जीवन में जो कुछ मूल्यवान् और महत्वपूर्ण है, वह सब हमें पूर्व से ही मिला है। ऐसी स्थिति में जब भी हम पूर्व की ओर जायें तब हमें यह सोचना चाहिए कि पुरानी स्मषतियों को संजोये हम अपने पुराने घर की ओर जा रहे हैं।' ("We all come from the East—all that we value most has come to us from the East and by going to the East every body ought to feel that he is going to his 'old home' full of memories, if only we can read them."--P.21).

प्रो. मैक्समूलर के विचारों में भारत और वेदों के प्रति जो वैचारिक परिवर्तन आया उसका एकमात्र कारण प्रो. मैक्समूलर का महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित यजुर्वेद तथा ऋग्वेद भाष्य का अध्ययन था। एक जर्मन मूल का ब्रिटिश नागरिक महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य से इतना अधिक प्रभावित हो सकता है, इसे हम

...शेष पृ. ६ पर

'मनुष्य मरने से डरता क्यों है?'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

मनुष्य मरने से डरता क्यों है? यह प्रश्न इस लिए विचारणीय है कि हम सभी इस दुःख से यदा–कदा त्रस्त होते रहते हैं। कई बार मनुष्य को कोई रोग हो जाता है तो उसके मन में भय उत्पन्न होता है कि हो न हो, मैं जीवित रहूंगा या मर जाउगां? जब तक चिकित्सक व जांच रिपोर्ट से पुष्टि न हो जाये कि यह रोग ठीक हो सकता है, रोगी की सन्तुष्टि नहीं होती। यदि मनुष्य को कोई भयंकर रोग होता है तो चिकित्सक व परिवार जन उसे बताते ही नहीं कि कहीं भय के कारण यह जल्दी न मर जाये? वष्द्धावस्था आने पर मष्त्यु की तिथि पास आने लगती है। सभी यह कहते सुने जाते हैं कि एक दिन सभी को जाना है परन्तु अपने बारे में विचार करने पर डर लगता है। अपने बारे में इस प्रश्न को सभी टाले रहते हैं। मष्त्यु का यह डर सभी को लगता है। इसका कारण क्या है, यह विचारणीय है। हम सांप से अधिक डरते हैं क्योंकि हमने सुन रखा है कि सांप के काटने से मनुष्य की मष्त्यु हो जाती है। यदि हमें कोई चींटी व अन्य क्षुद्र जीव काट ले जिससे हमें खतरा न हो, तो हमें डर नहीं लगता। अनेक मामलों में मनुष्य की मष्त्यु का कारण डर ही होता है। हमने एक घटना प्रवचनों में सुनी थी जो शायद सत्य घटना पर आधारित है। इसके अनुसार एक बार एक निर्धन व्यक्ति अपनी झोपड़ी का छप्पर ठीक कर रहा था। उसने अनुभव किया कि उसके पैर में जैसे किसी चींटी आदि ने काट लिया हो। बात स्थान विशेष पर खुजली कर आई–गई हो गई। एक दो वर्ष बाद फिर वही व्यक्ति पुराने छप्पर को हटा कर नया लगा रहा था तो उसने देखा कि छप्पर में एक मरे हुए सांप की खाल पड़ी है। उस व्यक्ति को पुरानी घटना याद हो आई कि उसे किसी चींटी आदि ने काटा था, परन्तु सांप की उस खाल को देख कर उसे निश्चय हुआ कि इसी सांप ने उसे काटा होगा। यह विचार कर वह व्यक्ति इतना डरा कि इस डर से ही उसकी मष्त्यु हो गई। अतः हमें अपने परिवार व परिचितों आदि की मष्त्यु को देखकर व रोगादि होने पर यदा–कदा अपनी मष्त्यु का डर सताता रहता है। किसी भी मनुष्य की मष्त्यु के कई कारण हो सकते हैं परन्तु किन्हीं अज्ञात भय के कारण भी बहुधा मष्त्यु हो जाया करती हैं। अतः ज्ञान को प्राप्त कर मनुष्य को मष्त्यु के डर से निजात पानी चाहिये। मष्त्यु के भय को दूर कर उसे अपनी वास्तविक व सामान्य मष्त्यु तक भयमुक्त जीवन व्यतीत करना चाहिये।

भय का यदि कारण ढूंढा जाये तो अन्य कारणों में हमारे अन्दर यह पूर्वजन्मों का संस्कार प्रतीत होता है। मनुष्य को जब तक जिस चीज का संस्कार=संयोग व पूर्व अनुभव न हुआ हो, उसको उसके लाभ–हानि व सुख–दुःख का ज्ञान नहीं होता। मान लीजिए कि मेरे सामने खाने का एक नया पदार्थ या फल रख दिया गया है। मैं इस वस्तु को जीवन में पहली बार देख रहा हूं। मुझे नहीं पता कि यह स्वादिष्ट है, मीठा है, खट्टा या अन्य किसी स्वाद का है। इसको जब पहली बार जिह्वा पर रखता हूं तो मुझे उसके स्वाद का ज्ञान होता है, उससे पूर्व नहीं। शरीर पर उसके प्रभाव के लिए विज्ञान की शरण लेनी पड़ती है। इसके बाद मैं जब उस वस्तु व पदार्थ को देखता हूं तो मुझे पूर्व का वह अनुभव स्मरण हो आता है और अपनी प्रवृत्ति के अनुसार मैं उसे ग्रहण करता–कराता हूं। **हमें मृत्यु का भय सताता है तो इसका अर्थ यह हुआ कि हमें इसका पुराना अनुभव है। यह अनुभव इस जन्म का तो निश्चय ही नहीं है, अतः यह अनुभव पूर्वजन्म व जन्मों का सिद्ध होता है। इस आधार पर जीवात्मा वा मनुष्य का पूर्वजन्म भी सिद्ध होता है।** योगदर्शन में इसे अभिनिवेश क्लेश का नाम दिया है। यदि मनुष्य योगदर्शन के पांच प्रकार के क्लेशों का अध्ययन कर ले तो उसे इन पांच क्लेशों अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश क्लेशों को जानने से मृत्यु व अन्य भयों से सामान्यतः मुक्ति मिल सकती है। **भय को पूरी तरह से दूर करना योग साधना का निरन्तर अभ्यास करते हुए समाधि को सिद्ध करने पर होता है। इसके लिये अष्टांग योग की शरण ही एक मात्र उपाय है। मृत्यु के भय को दूर करने और बार–बार के जन्म मरण के दुःखों से मुक्ति के लिए ही मनुष्य ईश्वरोपासना आदि करते हुए योगाभ्यास करता है। यह योगाभ्यास ही मृत्यु की यथार्थ औषधि है।**

यह मष्त्यु रूपी दुःख, भय आदि पांच क्लेशों में प्रधान अविद्या क्लेश के कारण होता है। इस भय का कारण क्योंकि अविद्या है, अतः अविद्या दूर होने पर मष्त्यु का भय दूर होना सम्भव है। अतः प्रत्येक मनुष्य को अपनी अविद्या दूर करनी चाहिये। अविद्या दूर करने के उपाय व साधन का नाम ही वेदाध्ययन, स्वाध्याय व योगाभ्यास है। केवल विषय को पढ़ लेने से पूरा लाभ नहीं मिलता, इसके लिये औषधि के रूप में साधन व उपाय भी करने होते हैं जो कि योगाभ्यास व यौगिक जीवन ही है। इसी लिए सष्टि के आरम्भ से विवेकयुक्त लोग योग की शरण में जाकर जीवन को सफल व उन्नत करते रहे हैं। **योगदर्शन में मष्त्यु के क्लेश को अभिनिवेश क्लेश नाम दिया गया है।** इसको बताते हुए योगदर्शनकार महर्षि पतंजलि ने कहा है कि **'स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढ़ोऽभिनिवेशः।'** अर्थात् **मनुष्यों पर संस्कारों के वशीभूत जो नैसर्गिकरूप से प्रवाहित होने वाला मत्युभय है, जो विद्वानों एवं मूर्खों के ऊपर समानरूप से सवार रहता है, उसे अभिनिवेश नामक क्लेश कहा जाता है।** महर्षि पंतजलि के इस सूत्र की व्याख्या करते हुए प्रसिद्ध दर्शनकार

आचार्य उदयवीर शास्त्री लिखते हैं कि संसार में आजाने पर प्रत्येक प्राणी की यह भावना रहती है कि वह सदा ऐसा ही बना रहे। ऐसा कभी न हो, कि वह न रहे। यह भावना प्राणी के मष्त्युभय को प्रकट करती है। सर्वसाधारण अपढ़ मूर्ख पामर व्यक्ति जो वास्तविकता को नहीं जानता व समझाता, उसकी ऐसी भावना बने, तो कोई आश्चर्य नहीं, परन्तु जो विद्वान् हैं, शास्त्र के पारदर्शी हैं, जानते हैं कि जो जन्म लेता है वह मरता अवश्य है, वे भी मूर्खो के समान मष्त्युभय से घबराते हैं। यह भय न केवल मानव में, अपितु कषमि कीट पतंग आदि क्षुद्र पाणियों तक में विद्यमान रहता है। जैसे ही किसी के सन्मुख प्राणसंकट आये, वह उससे बचने का तत्काल उपाय करता है, और ऐसे संकट के प्रति सदा सतर्क व सावधान रहता है।

प्राणीमात्र को किसी से भय अथवा किसी वस्तु के प्रति आकर्षण तभी होता है, जब उसने उस स्थिति अथवा वस्तु का प्रथम अनुभव किया हो। परन्तु एक जीवन में प्रादुर्भूत प्राणी ने अभी तक मष्त्यु के दुःख का अनुभव नहीं किया होता। अन्य प्राणियों को मरते–जाते दीखने पर भी व्यक्ति की उस भावना में कोई अन्तर नहीं आता, कि–मैं कभी न मरूं, सदा ऐसा ही बना रहूं। आचार्यों के उपदेश भी प्रायः इस दिशा में कोई कारगर नहीं होते। **इससे अनुमान होता है, कि पहले जन्मों में प्राणी ने मष्त्यु के तीव्र दुःख का अनुभव किया है।** उसी से जनित संस्कार इस जीवन में निमित्तवश उभरने पर प्राणी को भय से बेचैन बनाये रखते हैं। यह **'अभिनिवेश'** नाम मष्त्युभय का क्लेश प्राणीमात्र में समानरूप से पाया जाता है। चाहे कोई कुशल हो, या अकुशल, मष्त्यु का अवसर सबके लिये समानरूप से आता है, और समानरूप से सबको भयत्रस्त करता है। इन क्लेशों को ध्वस्त करने और इनसे बचने के लिये साधक को सदा निर्दिष्ट उपायों के अनुष्ठान में प्रयत्नशील बना रहना चाहिये। इसके बाद के सूत्र में महर्षि पतंजलि ने क्लेशों को दूर करने का उपाय बताते हुए कहा है कि इन पांचों क्लेशों को अपने अपने कारणों जिनसे यह उत्पन्न हुए व होते हैं, उनमें विलय कर देने से मनुष्यादि लोग मष्त्यु के भय अभिनिवेश क्लेश से छूट पाते हैं। इस विषय को सुस्पष्ट व विस्तार से जानने के लिए योगदर्शन पर आचार्य उदयवीर शास्त्री की टीका पढ़नी आवश्यक है। इससे न केवल मष्त्युभय के क्लेश का निवारण होगा वहीं अन्य अनेक प्रकार के लाभ भी अध्येता को वर्तमान व शेष जीवनकाल में हो सकते हैं।

मनुष्य मरने से क्यों डरता है, इसका एक उत्तर हमारे सामने यह आया है कि जन्म जन्मान्तरों के मष्त्यु के संस्कार वा अनुभव जीवात्मा पर हैं। उनके कारण ही हमें मष्त्यु का डर सताता है। इस भय के मुख्य कारणों में अविद्या नामक क्लेश प्रमुख है जिसे, व अन्य क्लेशों को भी, यदि हटा दिया जाये तो मष्त्यु का भय सर्वथा दूर हो सकता है। योगदर्शनकार ने इससे पूर्णरूपेण बचने के लिए लिए अष्टांग योग की रचना की है। समाधि अवस्था को प्राप्त होने पर ही यह अविद्या पूर्णतया दूर होती है जिससे मनुष्य मष्त्यु के भय से मुक्त हो जाता है। आधुनिक युग में महर्षि दयानन्द इसका साक्षात उदाहरण हैं। उनके जीवन के उत्तर काल में मष्त्यु के भय ने उन्हें कभी त्रस्त नहीं किया। इस मष्त्युभय को यदि अधिक सरल शब्दों में कहा जाये तो इस उदाहरण से कह सकते हैं। जब हम किसी सुखकारी वस्तु जो हमसे भिन्न है व हमारा अंग नहीं है, अपनी समझ लेते हैं, तो इसका कारण उस वस्तु से हमारा राग व मोह होना होता है। ऐसी सुखकारी वस्तु के दूर होने, छीनने व छूटने पर मनुष्य को स्वभाविक रूप से दुःख होता है। अपने अपने शरीर से भी इसी प्रकार का मोह व राग हो गया है। यह शरीर मेरा व हमारा अवश्य है परन्तु यह **"मैं" नहीं है। मैं व मेरा दो अलग सत्तायें हैं। मैं 'मैं'** हूं और मेरा मुझ मैं से भिन्न है। मेरी पुस्तक मैं नहीं अपितु मुझसे पष्थक मेरी है। इसी प्रकार मेरा शरीर, मेरा हाथ, आंख, नाम व पैर आदि मेरे अवश्य हैं परन्तु मुझसे व मैं से भिन्न हैं। इस भेद को जान लेने और इस भावना से जीवन व्यतीत करने से भी अभिनिवेश क्लेश कटता वा कम होता है। इस सत्य को जानकर ही मनुष्य यदि जीवन में आचरण करेगा तो उसके मष्त्यु के भय में कभी आयेगी। उसके जीवन की उन्नति होगी और जब वह संसार छोड़ेगा तो सामान्य जनों की अपेक्षा वह दुःखी नहीं होगा। उसे यह निश्चय होगा कि मष्त्यु के बाद उसे उसके कर्मानुसार उन्नत व अवनत जीवन मिलेगा जहां वह उन्नति करते हुए मोक्ष तक जा सकेगा। इन्हीं शब्दों के साथ लेख को विराम देते हैं।

–मनमोहन कुमार आर्य

...पृ. ४ का शेष

दयानन्द का जादू ही कह सकते हैं जबकि भारत में जन्में नाम मात्र के शिक्षित विद्वान अपने व्यक्तिगत तुच्छ लाभों के लिए विदेशियों के शरणागत हो जाते हैं और उनके द्वारा सिखाये गये असत्य का ही प्रलाप करते हैं। प्रो. मैक्समूलर भारत आकर महर्षि दयानन्द के जीवन का अध्ययन कर उनका जीवन चरित भी लिखना चाहते थे जिसके लिए उन्होंने प्रस्ताव किया था। किन्हीं कारणों से यह महत्वपूर्ण कार्य नहीं हो सका। देश में प्रचलित अन्धविश्वासों व इनसे कुछ लोगों के हित व स्वार्थों के जुड़े होने कारण महर्षि दयानन्द को वेद प्रचार, समाज सुधार, अन्धविश्वासों व सामाजिक असमानता आदि दूर करने में जो सफलता मिलनी चाहिये थी, वह न मिली। यह भी कम नहीं है कि सन् 1863 से सन् 1883 तक के अपने मात्र 20 वर्षों के प्रचार से उन्होंने भारत में ध र्म व समाज सुधार की सुदृण नींव डाली और देश को स्वतन्त्रता के मार्ग पर आरूढ़ कर, अपने रक्षितों के द्वारा विषपान द्वारा विश्वासघात से ग्रस्त होकर बिना किसी शिकायत के, संसार से चले गये। हम अनुभव करते हैं कि न केवल भारत के वैदिक मतों के अनुयायी ही अपितु विश्व के सभी मनुष्य स्वामी दयानन्द के सत्यधर्म के अन्वेषण और उसके प्रचार के लिए सदा सदा के लिए ऋणी हैं। 'ईश्वर के प्यारे, भारत माता के दुलारे वेदों वाले स्वामी दयानन्द, तेरी जय जयकार हो' शब्दों के साथ लेख को विराम देते हैं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का राजनीतिक-दर्शन

-डॉ. लाल साहब सिंह

(प्रस्तुत लेख, लेखक के प्रकाशित शोध-प्रबन्ध 'स्वामी दयानन्द का राजनीतिक-दर्शन' (प्रकाशक-आर्यसमाज कलकत्ता, प्रथम संस्करण १९९० ई०) से गृहीत है, जो इस ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय 'उपसंहार' (पृ. ३५० से ३८०) का संशोधित और संक्षेपीकरण है। पाद-टिप्पणियाँ भी नये ढंग से लिखी गई हैं-सम्पादक)

स्वामी दयायन्द बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। विशुद्ध आध्यात्मिक विचारक होते हुए भी उन्होंने मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र-धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक में अपनी अप्रतिम प्रतिभा का परिचय दिया है। अपने ब्रह्मसुख की चिन्ता छोड़कर उन्होंने मानव तथा राष्ट्र के चतुर्दिक् उन्नयन-हेतु मन, वचन तथा कर्म से अथक प्रयास किया है। यही कारण है कि आध्यात्मिक दयानन्द और राष्ट्रवादी दयानन्द में अन्तर कर पाना दुष्कर प्रतीत होता है। उन्होंने किसी देश, धर्म या जातिविशेष के लिए चिन्तन नहीं किया है, अपितु उनका चिन्तन समस्त मानव-जाति से सम्बद्ध है। वे विश्व-नागरिक थे। वे अपनी कृतियों से भी कहीं अधिक ऊँचे थे। धार्मिक व्यक्ति के रूप में सार्वजनिक जीवन में प्रविष्ट हुए और राष्ट्रवादी दो गए। वे शुद्धताग्राही थे। उनके लिए सत्य की उपासना ही सच्ची उपासना थी। धर्म के मिथ्वाडम्बरों पर आक्रोशभरी उनकी कठोरता यथार्थ को उद्घाटित करने वाली सीधी-सादी शैली है। आध्यात्मिक एवं राष्ट्रवादी विचारों में पूर्णतया निमग्न दयानन्द ने तत्कालीन दुर्व्यवस्था एवं अधोगति को समाप्त करने के लिए जिस भावावेगपूर्ण बाग्मिता तथा निर्भीकता से लेखन-प्रवचन किया, वह उनके अद्वितीय व्यक्तित्व का प्रतीक है।

राजनीतिक परिधि से सर्वथा असम्पृक्त रहते हुए भी राजनीति के क्षेत्र में प्रभूत अवदान, दयानन्द जैसे सन्त दार्शनिक की सर्वप्रमुख विशेषता है। उनके राज-दर्शन का आधार वेद एवं आर्ष ग्रन्थों में निहित अभ्युदयवादी मान्यताएँ हैं। यह सत्य है कि महर्षि दयानन्द का युग तथा युग-चेतना वर्त्तमान युग की चेतना से भिन्न थी, परन्तु उनके राजनीतिक दर्शन में अनेक ऐसे शाश्वत तत्त्व निहित है, जो सार्वजनीन एवं सार्वकालिक होने के साथ ही साथ वर्त्तमान में भी सर्वथा उपयुक्त एवं अनुपालनीय हैं। दयानन्द के राजनीतिक योगदान को निम्नांकित उपशीर्षकों में प्रस्तुत किया जा सकता है -

(१) आधुनिक राजनीतिकचिन्तन में आर्षग्रन्थप्रमाणवाद एवं ऐतिहासिक उपागम के प्रयोगकर्त्ता :

प्रख्यात फ्राँसीसी प्रकृतिविज्ञ जार्ज लुई'[1], दयानन्द के सम्बन्ध में पूर्णतया चरितार्थ होता है। स्वामी दयानन्द के कथन की स्पष्टता उनके चिन्तन की स्पष्टता का प्रतिफल है। उन्होंने अपने प्रत्युत्पन्नमतित्व एवं वर्षों की कठोर साधना से संचित ज्ञान और ध्यान द्वारा अपने विचारों के सत्यापन-हेतु वेदादि आर्षग्रन्थों का प्रमाण प्रस्तुत कर दर्शन के क्षेत्र में अध्ययन के ऐतिहासिक उपागम के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। उनका अभिमत था कि राज्य या समाज के प्रारम्भिक स्वरूप और विकास के विभिन्न करणों का अध्ययन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में ही किया जा सकता है। यही कारण है कि दयानन्द ने राज्य की उत्पत्ति, विकास, प्रकृति, क्षेत्र, कार्य, प्रकार, न्याय, अर्थ, रक्षा एवं राष्ट्रवादी चिन्तन के पक्ष-पोषण में पदे-पदे वेद तथा प्राचीन भारत के गौरवपूर्ण इतिहास का उद्धरण दिया है। वेदादि शास्त्र एवं इतिहास से उपलब्ध ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर ही उन्होंने अपने समस्त विचारों को श्रेणीबद्ध किया है। दार्शनिक दृष्टिकोण से इसे निगमनात्मक या आदर्शमूलक पद्धति भी कहा जा सकता है। दयानन्द की ऐतिहासिक पद्धति हमारी संस्कृति, सभ्यता, धर्म एवं दर्शन के मूलभूत उच्चादर्शों के आधार पर भविष्य के प्रति सचेष्ट एवं सजग करते हुए राष्ट्र रक्षा एवं विकास का मार्गदर्शन कराती है।

(२) आधुनिक भारत में धर्मानुप्राणित राजनीति के प्रथम प्रणेता :

पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास साक्षी है कि पुनर्जागरण आन्दोलन में अग्रणी इटली के फ्लोरेन्स नगर के राजनीतिक विचारक मैकियावेली (सन् १४६९-१५२७ ई०) के युग से ही राजनीति को धर्म एवं नैतिकता से पूर्णतया पृथक् करना प्रारम्भ कर दिया गया था। मैकियावेली का मत था कि, "राज्य किसी नैतिकता को नहीं जानता। जो कुछ वह करता है वह न तो नैतिक है और न अनैतिक, प्रत्युत वह नैतिकता रहित है।"[2] मैकियावेली तथा उसके परवर्त्ती हाब्स आदि विचारकों के इस प्रकार के चिन्तन का दुष्परिणाम यह हुआ कि शनैः -शनैः विश्व के अधिकांश राज्यों में परस्पर आचार-व्यवहार और नीति-रीति में छल-छद्म, धोखाधड़ी, अवसरवादिता, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, शोषण, हिंसा, युद्धोन्माद आदि कुत्सित प्रवृत्तियों की वृद्धि होती गयी। फलस्वरूप, आज विश्व-मानवता विनाश के कगार पर खड़ी है।

भारतीय राजनीतिक चिन्तन से आधुनिक इतिहास में स्वामी दयानन्द जैसा भविष्यदर्शी तत्त्ववेत्ता दार्शनिक धर्मविहीन राजनीति की दुःखद परिणिति की सम्भावना से पूर्व ही परिचित था। इसीलिए उनका यह ध्रुव विश्वास था कि धर्म-नीति से पृथक् होकर राजनीति सर्वथा स्वार्थ एवं कपट-नीति बनकर रह जाती है। अपने इसी विश्वास के फलस्वरूप दयानन्द ने राजनीति को वेद-प्रदत्त शास्त्र स्वीकार करते हुए, उसे राज्य-संचालन का वह धर्म माना है, जिससे मानव-जाति के समस्त लौकिक एवं पारलौकिक प्रयोजनों की पूर्ति सम्भव हो। यही कारण है कि उन्होंने 'राज' शब्द के साथ 'नीति' के स्थान पर 'धर्म' शब्द संयुक्त किया है। परन्तु ध्यातव्य है कि दयानन्द ने 'धर्म' शब्द का प्रयोग धारण करने तथा अभ्युदय एवं निःश्रेयस के अर्थ में किया है, किसी सम्प्रदाय के अर्थ में नहीं। वस्तुतः जिस प्रकार आत्मा के अभाव में शरीर संज्ञा-शून्य होकर नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार धर्म-शून्य राजनीति भी नष्ट हो जाती है।[3] इसीलिए दयानन्द ने धर्मानुप्राणित राजनीति को ही स्वीकृति प्रदान की है।

उपर्युक्त कथनों एवं समीक्षाओं के परिप्रेक्ष्य में यह कहा जा सकता है कि यदि हमें राजनीति में समाविष्ट दोषों तथा भ्रष्टाचारों आदि को समाप्त कर मानव-मूल्यों को सुरक्षित रखना है, तो निश्चय ही दयानन्द प्रतिपादित धर्मानुप्राणित राजनीति के सिद्धान्त को व्यवहाररूप में प्रयुक्त करना होगा। दयानन्द ने राजनीतिक सत्ता (क्षत्र) को आध्यात्मिक सत्ता (ब्रह्म) से समन्वित कर जिस वैदिक आदर्श की स्थापना की है, वह आज अनुपालनीय है।

(३) मानववादी राजनीतिकदर्शन का प्रतिपादन :

पाँचवीं शताब्दी ईसापूर्व के प्रसिद्ध यूनानी मानववादी सोफिस्ट दार्शनिक प्रोटागोरस ने मानव के अस्तित्व और उसके सकारात्मक मूल्यों की महत्ता पर बल देते हुए यह उद्घोषित किया था कि, "मनुष्य ही प्रत्येक वस्तु का पमापदण्ड है।"[४] अर्थात् मानववाद वह चिन्तन या जीवन-दृष्टि है, जिसके अन्तर्गत मानव की स्वतन्त्रता, सम्प्रभुता, आत्मचेतना, बौद्धिकता और आध्यात्मिकता का सम्यक् रूप से संरक्षण होता है। वस्तुतः मानववाद वर सिद्धान्त, दृष्टिकोण या जीवन-पद्धति है, जिसमें मनुष्य की गरिमा और मूल्यवत्ता को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है और यह माना जाता है कि मनुष्य अपनी तर्कबुद्धि का प्रयोग करके तथा वैज्ञानिक पद्धति अपनाकर आत्म-साक्षात्कार करने में समर्थ है।[५] यह दृष्टिकोण मनुष्य के अस्तित्व या गौरव को आध्यात्मिक तत्त्वों के साथ-साथ मनुष्य को विवेकशील प्राणी मानकर उसके विवेक को सबसे मूल्यवान् तत्तव समझता है।

मानववाद-सम्बन्धी उपर्युक्त मान्यता के परिप्रेक्ष्य में यदि दयानन्द के राज-दर्शन का मूल्यांकन किया जाय तो ज्ञात होगा कि दयानन्द सच्चे अर्थों में एक मानववादी विचारक थे। उनके विचारों को यदि किसी 'वाद' की संज्ञा देनी पड़े तो 'मानववाद' ही सर्वथा उपयुक्त होगा। दयानन्द का मानववाद टैगोर की भाँति इस दार्शनिक विश्वास पर आधारित था कि परमात्मा सम्पूर्ण विश्व में व्यास है। उनका मानववाद गाँधी के मानववाद के तुल्य कोरा आध्यात्मिक न होकर वैज्ञानिक था। दयानन्द ऐसे मानववादी दार्शनिक थे, जिन्हें ईश्वर की सत्ता और मानव-सत्ता दोनों पर समान रूप से विश्वास था। वे मानवता को ईश्वर और मावधर्म को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते हैं। इनके लिए धर्म कोई कर्मकाण्ड, सम्प्रदाय या मजहबी मान्यता नहीं है। अपितु वह है - सदा परहित के लिए स्वहित का त्याग करना।

दयानन्द के मानववाद की आधारशिला थी - मानव की त्रासदस्थिति। व्यक्ति की पीड़ा, निराशा, नास्तिभाव एवं पार्थक्य आदि का दयानन्द के संवेदनशील हृदय पर पड़े प्रभाव के फलस्वरूप उत्पन्न वैचारिकी का नाम ही मानववाद है। दयानन्द के मानववादी अवधारणा की पुष्टि उनके मनुष्य की परिभाषा से हो जाती है, जिसके अनुसार, "मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे।....... उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावे, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।"[६] स्वामी दयानन्द के मानववाद को समझने हेतु इस परिभाषा से उपयुक्त अन्य तर्क क्या हो सकता है ? वे मानववाद को ही आधुनिक युग का सर्वोत्तम आदर्श मानते थे।

स्वामी दयानन्द के चिन्तन का जन्म राष्ट्र और मानव के दलित, शोषित, परतन्त्र एवं दीन-हीन स्थिति से मुक्त होने के उपायों की खोज से हुआ है। उनके हृदय में राष्ट्र और व्यक्ति की दैन्यावस्था की असीम वेदना रहती थी। इसीलिए उन्होंने देश-भक्ति को मानव-धर्म का प्रथम सिद्धान्त माना है। मानवता के प्रतिमूर्ति दयानन्द ने इसीलिए क्रान्ति का समर्थन किया है। उनके मतानुसार पददलित जनता को विद्रोह का अधिकार है। वे भारत की ही नहीं, अपितु समस्त मानव-जाति की स्वतन्त्रता के आकांक्षी थे। मानववादी होने के कारण ही वे संकीर्ण राष्ट्रीयता के कट्टर आलोचक और विश्वसंघ (चक्रवर्ती सार्वभौम राज्य) के समर्थक थे। मानव-समस्या पर उनका दृष्टिकोण सार्वभौमिक था, उनका लक्ष्य विश्व में सुख, शान्ति, उन्नति और समृद्धि की स्थापका करना था। वे युद्ध को मात्र धर्मयुद्ध तक ही सीमित रखना चाहते थे। युद्ध का प्रयोग शान्ति के अन्य समस्त विकल्पों के विफल हो जाने पर ही किया जाना चाहिए। उन्होंने जिस विदेशनीति का समर्थन किया है, वह युद्ध की विभीषिका से मानव-जाति और वैदिक धर्म के रक्षार्थ शान्ति का समर्थन करती है।

दयानन्द आजीवन मानव-जीवन की उच्चता के लिए संघर्षरत रहे। वे आर्थिक शोषण, राजनीतिक दासता, सामाजिक एवं धार्मिक विकृतावस्था को समाप्त करने के उद्देश्य से ही मोक्ष-मार्ग का परित्याग कर मानव-सेवा और देश-सेवा में संलग्न हो गए। वे मानववादी थे, परन्तु उग्र व्यक्तिवादी नहीं। उनके मानववाद में स्वार्थवाद की गन्ध तक नहीं है। उनके मानववाद का सर्वोत्तम विकासित स्वरूप का नाम ही राष्ट्रवाद है। उनका वेद-प्रतिपादित वैज्ञानिक मानववाद अर्थनीति, धर्मनीति, विदेशनीति, राजनीति और समाजनीति में सर्वत्र परिव्यास है। उनका मानववाद ऐसे समाज की रचना का दर्शन है, जिसमें आर्थिकन्याय, प्रत्येक स्त्री-पुरुष को स्वतन्त्रता और अवसर की समानता, उच्च नैतिक सांस्कृतिक विकास, आध्यात्मिक वैदिक मूल्यों की स्थापना, सहयोग, सद्भाव, विश्वबन्धुत्व की कामना और सत्कर्म की अभिलाषा निहित हो।

(४) लोकप्रिय सम्प्रभुता के सिद्धान्त का प्रतिपादन :

राजनीति-विज्ञान में सम्प्रभुता की अवधारणा का सर्वाधिक महत्त्व है। सम्प्रभुता 'राज्य' का एक आवश्यक तत्त्व है। सम्प्रभुता के विभिन्न रूप होते हैं, यथा-नाममात्र की सम्प्रभुता, वैधानिक या कानूनी सम्प्रभुता, राजनीतिक सम्प्रभुता, सार्वजनिक या लोकप्रिय सम्प्रभुता, वैध तथा वस्तुतः सम्प्रभुता। इनमें से प्रजातान्त्रिक देशों में किसी न किसी रूप में लोकप्रिय या जनसम्प्रभुता का ही विशेपतः प्रजलन है। जब सम्प्रभुता (सर्वोच्च शक्ति) का अधिवास जनता या मतदाताओं में होता है, तब लोकप्रिय सम्प्रभुता कहा जाता है। इस सिद्धान्त का आविर्भाव १६वीं और १७वीं शताब्दी में हुआ और फ्राँस की राज्यक्रान्ति, अमरीकी स्वतन्त्रता-घोषणा तथा समस्त प्रजातान्त्रिक देशों में लोक-प्रभुता को लोकतन्त्र के पर्याय के रूप स्वीकार किया गया है।

स्वामी दयानन्द ने मूलतः धर्म (वेदोक्त) की सम्प्रभुता को स्वीकृति दी है, जिससे राजा और प्रजा दोनों अनुशासित होते हैं। परन्तु राजा के निर्वाचन से लेकर सभासदों के चयन और राज्यकर्मियों की नियुक्ति तक में प्रजा की सम्मति प्राप्त करने का निर्देश देकर दयानन्द ने लोकप्रिय सम्प्रभुता को ही मान्यता दी है।

राज्य-शासन के प्रत्येक क्षेत्र में जनता की राजनीतिक सहभागिता और विधि-निर्माण में जनमत-संग्रह की व्यवस्था द्वारा प्रजा को ही महत्त्व दिया है । यही नहीं अपितु किसान आदि जन सामान्य को 'राजाओं का राजा' कहकर दयानन्द ने यह स्थापित कर दिया है कि वास्तविक शक्ति प्रजा में ही निहित है । इस प्रकार उनके चिन्तन में जन सम्प्रभुता के सिद्धान्त का स्पष्ट प्रतिपादन हुआ है ।

(५) प्रजातन्त्रीय समिति राजतन्त्र का प्रतिपादन :

प्राचीन भारतीय राजनीतिकचिन्तन के इतिहास में वैदिक युग से लेकर मनु, भीष्म तथा कौटल्य आदि राज-शास्त्र प्रणेताओं द्वारा भी शासन के स्वरूप विषयक अवधारणा के रूप में सामान्यतः वंशानुगत राजतन्त्रीय व्यवस्था का ही अनुसमर्थन किया गया है । परन्तु स्वामी दयानन्द ने राजत्व के दैवी सिद्धान्त तथा उसकी स्वेच्छाचारिता, निरंकुशता तथा वंशानुगतता का घोर विरोध करते हुएगुण, कर्म एवं स्वभाव की श्रेष्ठता के आधार पर प्रजा द्वारा निर्वाचित एवं वैधानिक (धर्म) रूप से सीमित राजतन्त्रीय व्यवस्था को ही मान्यता दी है । राजा का पद निर्वाचित अध्यक्ष का पद है तथा वह तीनों सभाओं की सहमति और स्वीकृति से ही कोई कार्य करने की क्षमता रखता है । अपराध में राजा एवं राजन्यवर्ग को प्रजा से अधिक दण्ड का विधान करते हुए दयानन्द ने प्रजा-हित के प्रतिकूल आचरण करने वाले राजा को प्रजा द्वारा पदच्युत किए जाने के सिद्धान्त का भी प्रतिपादन किया है । राजा की शक्ति सभा एवं प्रजा की स्वीकृति पर निर्भर करती है ।

यद्यपि, दयानन्द की राज्य-व्यवस्था का बाह्यरूप राजतन्त्रीय प्रतीत होता है, परन्तु स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि वह वस्तुतः विकेन्द्रित लोकतन्त्रवाद की अवधारणा पर अवलम्बित है । महात्मा गाँधी से पूर्व स्थानीय स्तर पर राजनीतिक संस्थाओं की स्वायत्तता एवं स्वतन्त्रता का सर्वप्रथम प्रतिपादन दयानन्द ने ही किया है । यही नहीं, अपितु जहाँ महात्मा गाँधी के सर्वोदय की अवधारणा जॉन रस्किन और टालस्टाय जैसे पाश्चात्य विचारकों की प्रेरणा का परिणाम है, वहीं दयानन्द की यह विचारधारा वेद और मनुस्मृत्यादि आर्ष ग्रन्थों से प्रसूत विशुद्ध भारतीय है ।

दयानन्द की सीमित राजतन्त्रीय प्रजातान्त्रिक अवधारणा को ब्रिटिश शासन-व्यवस्था के तुल्य समझने की भूल की जा सकती है, क्योंकि वहाँ पर भी राजतन्त्रीय, कुलीनतन्त्रीय एवं जनतन्त्रीय व्यवस्था पायी जाती है । परन्तु प्रथमतः दयानन्द के काल में ब्रिटेन में शासन-व्यवस्था का वह स्वरूप नहीं था, जो वर्त्तमान में है, द्वितीयतः यदि ब्रिटिश शासन-व्यवस्था से तुलना की भी जाय तो दयानन्द द्वारा प्रतिपादित सीमित (वैधानिक) राजतन्त्र ब्रिटिश राजतन्त्र की भाँति वंशानुगत नहीं है, दयानन्द-निर्दिष्ट तीनों सभाओं में से कोई भी ब्रिटिश लार्डसभा की भाँति कुलीनता एवं परम्परा के आधार पर न गठित है और न शक्तिहीन ही है तथा महर्षि के जनतान्त्रिक मूल्य एवं संस्थाएँ संख्या की बहुलता पर भी निर्भर नहीं है । वस्तुतः दयानन्द की यह अवधारणा ब्रिटिश व्यवस्था से तत्त्वतः सर्वथा भिन्न और सत्य, धर्म एवं लोकतन्त्र में गुणात्मकता के सिद्धान्त पर आधारित हैं ।

(६) कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का प्रतिपादन :

आधुनिक भारतीय राजनीतिकचिन्तन के सम्पूर्ण इतिहास में अन्य किसी मनीषी ने राज्य के उद्देश्य एवं कार्य-क्षेत्र को इतना व्यापक एवं उदात्त स्वरूप प्रदान नहीं किया है, जितना कि स्वामी दयानन्द द्वारा प्रदान किया गया है । आधुनिक लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा भी मात्र भौतिक संसार की सर्वतोन्मुखी अभिवृद्धि तक ही सीमित है । दयानन्द का राज्य लौकि एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के उद्देश्यों से संयुक्त है । प्रजा के व्यक्तिगतजीवन (विवाह आदि) से लेकर शिक्षा, रक्षा, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक परम लक्ष्य तक राज्य का कार्य-क्षेत्र विस्तीणई है । दयानन्द के लिए राज-पद प्रतिष्ठा और भोग-हेतु नहीं, अपितु सेवा तथा त्याग-हेतु है । राजन्य वर्ग प्रजा का सेवक है, स्वामी नहीं है । दयानन्द ने प्रजा-हित में निरन्तर संलग्न रखने के उद्देश्य से ही ऐसी दिनचर्या का विधान किया है, जिसमें राज-वर्ग को भोग-विलास और हास-परिहास आदि के लिए अवकाश ही नहीं है ।

(७) विधि-शासन एवं स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष न्याय-व्यवस्था का प्रतिपादन :

स्वामी दयानन्द के राजनीतिक दर्शन का एक प्रमुख अवदान विधि के शासन के सिद्धान्त का प्रतिपादन है । उनका यह सिद्धान्त इसलिए और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है कि उनके युग में विधि राजाओं अथवा अंग्रेज शासकों की इच्छा का प्रतिफल मात्र हुआ करती थीं । विधि-विहीनता के उस युग में भी दयानन्द ने व्यक्ति एवं उसकी इच्छाओं के शासन को पूर्णतया अस्वीकार करते हुए विधि-शासन के सिद्धान्त की घोषणा की है । उनका मत है कि विधि का निर्माण वेदादि शास्त्रों के अनुसार सभा और प्रजा-सहमति द्वारा किया जाना चाहिए तथा वह विधि किसी दशा में ईश्वरीय विधान के प्रतिकूल न हो । इस प्रकार की विधि का अनुपालन राजा और प्रजा द्वारा समभाव से किया जाना चाहिए । शासन विधि का होगा, व्यक्ति का नहीं तथा विधि का सबको समान संरक्षण प्राप्त होगा । विधि के समक्ष समस्त स्त्री-पुरुष तथा राजा-प्रजा समान होंगे । उसके उल्लंघनकर्त्ता में कोई भी अदण्डय नहीं होगा ।

दयानन्द के राज-दर्शन में अत्यन्त व्यावहारिक एवं मनोवैज्ञानिक न्यायिकप्रक्रिया (साक्ष्य, शपथ, बहस, वकील आदि) का ही प्राविधान नहीं किया गया है, अपितु नारी की स्वाभाविक लज्जा एवं संकोच को ध्यान में रखते हुए स्त्री का स्त्रियों द्वारा ही साक्ष्य-ग्रहण एवं न्याय का विधान किया गया है । दयानन्द की न्याय-प्रणाली में सम्यक् दण्ड की संकल्पना के साथ योग्यता, पद, प्रतिष्ठा, शिक्षा एवं सामाकि स्थिति की विभिन्नता को दृष्टि में रखते हुए गुणात्मक और मात्रात्मक रूप से पृथक्-पृथक् कठोर दण्ड की भी व्यवस्था है । इस प्रकार दयानन्द की न्याय-व्यवस्था वर्तमान न्याय एवं शासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को समूल समाप्त करने हेतु अनुकारणीय है ।

(८) राष्ट्र-रक्षा पर बल :

दयानन्द के चिन्तन में देश की सुरक्षा पर विशेष बल दिया गया है । इस सन्दर्भ में उन्होंने रणनीति, युद्ध-प्रशिक्षण, तोप-बन्दूक आदि आग्नेयास्त्रों, प्रशिक्षित चतुरंगिणी सेना, युद्ध में स्त्रियों की सहभागिता आदि का उल्लेख करते हुए धर्म-युद्ध की अनुमति दी है, कूट-युद्ध की नहीं । दयानन्द ने राजनय और विदेशनीति-संचालन-हेतु निर्देशक तत्त्वों का भी सूत्रवत् संकेत किया है ।

(९) राष्ट्रवादी अवधारणा का विकास :

भारतीय राजनीतिकचिन्तन के विकास में दयानन्द के राष्ट्रवादी दर्शन का सर्वाधिक योगदान है। राजनीतिकचेतना और राष्ट्रवादी अवधारणा से शून्य तत्कालीन भारतीयों के समक्ष उन्होंने भारत के अतीत की गौरवशाली परम्परा के स्वाभाविक स्वरूप को प्रस्तुत कर स्वदेशाभिमान एवं पौरुष का भारतीय जन-जीवन में संचार किया है। स्वभाषा, स्वदेशी, स्वराज्य तथा स्वधर्म (वैदिक) के चार स्तम्भों पर उन्होंने आधुनिक स्वतन्त्र भारत के निर्माण की रूपरेखा प्रस्तुत की है। उनका राष्ट्रवाद एक साथ ही राजनीतिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। उनके इस चिन्तन से प्रभावित होकर ही कालान्तर में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में स्वराज्य, स्वदेशी और स्वभाषा जैसे महत्त्वपूर्ण कारकों को संघर्ष का आधार बनाया गया दयानन्द ने आर्य-भाषा हिन्दी को राष्ट्रीय एकता के सूत्र का महतत्वपूर्ण आधार माना था। महात्मा गाँधी भी अस्पृश्यता एवं भाषा के प्रश्न पर दयानन्द से प्रभावित थे। राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को मान्यता दिए जाने के पक्ष में उनका कथन था कि, "अगर आपका दृष्टि-क्षेत्र उत्तर में श्रीनगर तक, दक्षिण में कन्याकुमारी तक, पश्चिम में कैराची तक फैला है, जैसा कि होना चाहिए- तो आपको हिन्दी सीखनी ही होगी।"[७] बंगलौर में कर्नाटक हिन्दी दीक्षान्त-भाषण में महात्मा गाँधी द्वारा व्यक्त उपर्युक्त विचार दयानन्द की अवधारणा के समानान्तर ही है। वस्तुतः दयानन्द के राजनीतिकदर्शन ने भारतीय राष्ट्रवादी अवधारणा के विकास में ठीक उसी प्रकार प्रेरणा प्रदान की है, जिस प्रकार सुकरात, प्लेटो तथा अरस्तू के चिन्तन ने यूनान को, मैकियावेली ने इटली के पुनर्जागरण को, हाब्स तथा लॉक ने इंग्लैण्ड को, रूसो ने फ्रांस की राज्य-क्रान्ति को, हीगेल तथा काण्ट ने जर्मनी को तथा कार्ल मार्क्स के चिन्तन ने सोवियत रूस की क्रान्ति को प्रेरणा प्रदान की है। दयानन्द के राष्ट्रवादी चिन्तन के प्रभावस्वरूप प्रत्येक भारतीय का राष्ट्रवाद जाग उठा।

(१०) देशी राजाओं का सुधार :

दयानन्द का ध्रुव विश्वास था कि जबतक स्वदेशी राजाओं का चारित्रिक उन्नयन नहीं होगा, तब तक भारतीय स्वतन्त्रता के प्रयासों को अपेक्षित सफलता नहीं प्राप्त होगी, क्योंकि जैसा स्वभाव और चरित्र राजा का होता है, प्रजा का स्वभाव और चरित्र भी वैसा ही होता है। अपने **'यथा राजा तथा प्रजा'** के विश्वास के आधार पर दयानन्द ने महाराणाओं की धरती राजस्थान को अपने चिन्तन की कर्मभूमि बनाया तथा उन्हें राज-धर्म के प्रति जागृत करने, दुर्व्यसनों से पृथक् करने एवं उनमें स्वदेश-प्रेम की भावना को उद्दीप्त करने में ही वहीं अपना प्राणोत्सर्ग भी कर दिया। यह उनके राष्ट्र-प्रेम का ज्वलन्त उदाहरण है। उनके पत्र-व्यवहार से ज्ञात होता है कि दयानन्द उदयपुर के महाराणा श्री सज्जनसिंह, शाहपुराधीश नाहरसिंह, राव राजा मसूदा (अजमेर), जोधपुर नरेश यशवन्तसिंह एवं उनके अनुज कर्नल प्रतापसिंह, राव राजा तेजसिंह, झालवाड़ के राज राणा आदि को शासन-सम्बन्धी नियमों तथा दिनचर्या एवं दुवर्यसनों से पृथक् रहने हेतु समय-समय पर अनेक पत्र लिखते थे, जिसका अपेक्षित प्रभाव भी पड़ा। इसके अतिरिक्त, काशीनरेश महाराजा ईश्वरी नारायणसिंह, बड़ौदा रियासत के दीवान सर टी. माधवराव, जयपुर राज्य-कौंसिल के प्रभावी सदस्य तथा सचिव ठाकुर नन्दकिशोर, उदयपुर स्टेट के मन्त्री पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या, उदयपुर दरबार के सदस्य बारहट कृष्णसिंह तथा कवि श्यामलदास, कविवर उमरदान जैसे विभिन्न राजाओं, राजपुरुषों को भी दयानन्द ने अपने उपदेशों एवं पत्रों से उद्बोधित किया था।

(११) भारतीय स्वतन्त्रता की पृष्ठभूमि का निर्माण :

स्वामी दयानन्द ने भारत की स्वतन्त्रता-हेतु राष्ट्रीयता की अवधारणा को अपने स्वभाषा आदि के सिद्धान्त द्वारा एक गतिशील दर्शन दिया है। 'वेदों की ओर लौट चलने' तथा 'आर्यावर्त्त आर्यों के लिए है' का नारा देकर लगभग पचास वर्ष पश्चात् होने वाले राजनीतिक स्वराज्य के आन्दोलन को एक सशक्त आधार प्रदान किया है। उनके चिन्तन से प्रेरित एवं प्रभावित आर्यसमाजियों द्वारा भारत की स्वतन्त्रता की क्रान्ति में स्वर्णिम अध्याय का सृजन हुआ है। इसीलिए रोमां रोला ने लिखा है कि, "वस्तुतः भारतीय राष्ट्रीयचेतना के पुनर्जागरण में, जो इस समय (१९३० ई०) इस देश में अपने पूर्ण यौवन में दीख पड़ रही है, सबसे प्रबल प्रेरणा दयानन्द से प्राप्त हुई।"[८] अन्यत्र भी रोमां रोला ने स्पष्टतः लिखा है कि; "दयानन्द ने भारत के निष्प्राण शरीर में अपना अदम्य उत्साह, दृढ़ निश्चयात्मक संकल्प और सिंह जैसा रक्त प्रभावित कर उसे संजीवनी शक्ति दी है।"[९] दयानन्द के राष्ट्रवादी चिन्तन से प्रभावित बिहार के राज्यपाल श्री अनन्त शयनम् आयंगर का मत था कि, "महात्मा गाँधी यदि देश के राष्ट्रपिता हैं, तो स्वामी दयानन्द राष्ट्र के पितामह हैं।"[१०] इन्द्र विद्यावाचस्पति का निष्कर्ष है कि, "यदि हम यह कहें कि सन् १९४७ ई० के अगस्त मास की पन्द्रह तारीख को जिस स्वाधीनता-यज्ञ की पूर्ति हुई, उसका प्रारम्भ महर्षि दयानन्द ने किया था और अन्तिम आहुति महात्मा गाँधी ने दी थी, तो कोई अत्युक्ति न होगी।"[११] उपर्युक्त कथन इस तथ्य के साक्ष्य हैं कि दयानन्द ने ही भारतीय स्वतन्त्रता की पृष्ठभूमि निर्मित की थी। उन्होंने ही भारत के राष्ट्रीय जागरण की प्रथम दीप-शिखा प्रजवलित की है।

(१२) स्वतन्त्रता-संग्राम-सेनानियों के जनक एवं प्रेरणा-स्त्रोत :

स्वामी दयानन्द भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों के जनक थे। यदि भारतीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन के इतिहास का अध्ययन किया जाय, तो यह ज्ञात होता है कि उस काल के जिन नेताओं, देशभक्तों एवं क्रान्तिकारियों ने स्वतन्त्रता-हेतु आत्माहुति दी थी, उनमें अधिकांश पर दयानन्द के व्यक्तित्व एवं शिक्षाओं का प्रभाव पड़ा था। इस प्रकार के क्रान्तिकारियों में श्याम जी कृष्ण वर्मा, स्वामी श्रद्धानन्द तथा लाला लाजपत राय उनके शिष्य एवं परमभक्त थे तथा इनके अतिरिक्त बाल गंगाधर तिलक, विपिनचन्द्रपाल, गेंदालाल दीक्षित, स्वामी श्री भवानीदयाल, भाई परमानन्द, भगतसिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, यशपाल, गणेशंकर विद्यार्थी आदि क्रान्तिकारी-देशभक्तों ने आर्यसमाज से ही देशभक्ति की शिक्षा ग्रहण की थी। यही नहीं अपितु महात्मा गाँधी पर भी दयानन्द के चिन्तन का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था। महात्मा गाँधी के गुरु गोपालकृष्ण गोखले और गोखले के गुरु न्यामूर्ति गोबिन्द रानडे थे, जो दयानन्द के परमशिष्य ही नहीं, अपितु दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा अजमेर के प्रतिष्ठित अधिकारी भी थे। अतः शिष्यपरम्परा के

अन्तर्गत दयानन्द गाँधी के गुरु के भी गुरु थे।

स्वामी दयानन्द ने स्वतन्त्रता-संग्राम और उसके सेनानियों का जो पथ-प्रदर्शन किया है, उसकी प्रशंसा और पुष्टि विभिन्न भारतीय एवं पाश्चात्त्य विद्वानों एवं इतिहासकारों ने भी की है । प्रसिद्ध इतिहासकार यदुनाथ सरकार का मत है कि, "जब भारत के उत्थान का इतिहास लिखा जाएगा, तो 'नंगे फकीर' दयानन्द सरस्वती को उच्चासन पर बिठाया जाएगा।"[१२] दयानन्द और आर्यसमाज के कार्य एवं प्रभाव को स्पष्ट करते हुए पाश्चात्य विद्वान् बेलेण्टाइन शिरोल का निष्कर्ष था कि, "जहाँ-जहाँ आर्यसमाज का चोर है, वहाँ राजद्रोह प्रबल है।"[१३] महात्मा गाँधी की यह स्वीकृति है कि अनेक आर्यसमाजी उनके सक्रिय कार्यकर्त्ता बन गए थे।[१४] काँग्रेस द्वारा नियुक्त पं० मोतीलाल नेहरू तथा मौलाना हसरत मुहानी की एक रिपोर्ट के अनुसार सत्याग्रह में जेल जाने वाले सत्तर से नब्बे प्रतिशत लोग आर्यसमाजी ही थे।[१५] लाला लाजपत राय का कथन था कि, "स्वामी दयानन्द ने मुझे मेरी आत्मा का दान दिया। मैं इनका मानस-पुत्र होने के नाते उनका ऋणी हूँ।"[१६] महर्षि के 'सत्यार्थप्रकाश' में देश की दुर्दशा के मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी वर्णन को पढ़कर तथा दयानन्द की देशभक्ति की भावना को अनुभव कर सनातन धर्मानुयायी तथा देश-भक्त मदनमोहन मालवीय के भी नेत्र सजल हो उठते थे।[१७] उपर्युक्त समस्त कथनों के प्रकाश में निस्संकोच कहा जा सकता है कि दयानन्द ने अपने राष्ट्रवादी विचारधारा द्वारा भारतीयस्वन्त्रता-आन्दोलन एवं क्रान्तिकारियों को प्रेरणा एवं शक्ति प्रदान की है।

(१३) विश्व-नागरिकता, विश्व-संगठन एवं विश्व-शान्ति के अग्रदूत :

दयानन्द के चिन्तन ने संकुचित राष्ट्रवाद की संकल्पना के स्थान पर अन्तरराष्ट्रवाद की विचारधारा का प्रतिपादन कर विश्व-नागरिकता, विश्व-संगठन एवं विश्व-शान्ति का सन्देश दिया है । अन्तरराष्ट्रवाद वह भावना है, जो व्यक्ति को अपने राज्य का ही सदस्य होने का गौरव नहीं प्रदान करती है, अपितु उसे विश्व-नागरिक बना देती है । दयानन्द ने सार्वभौमिक भ्रातृत्व एवं प्रेम का सन्देश देते हुए अपना मन्तव्य स्पष्ट किया है कि, ".......... जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्त्तता हूँ, वैसा विदेशियों के साथ भी.........."[१८] उन्होंने विश्व के पर्यावरण को शुद्ध कर प्राणिमात्र को जीवन देने के लिए रूढ़िवादी यज्ञ-पद्धतियों के वजाय वैज्ञानिक अग्निहोत्र-पद्धति को व्यावहारिकता प्रदान की । प्रदूषित संकल्प एवं विचारों तथा रूढ़िवादी चिन्तनग्रस्त मानवजाति को मुक्ति दिलाकर शिव-संकल्प के विशाल क्षेत्र में विचरण करने को अग्रसर किया । विश्व-शान्ति-हेतु शिव-संकल्पमय अमृतरूपी वेदवाणी के अध्ययन-अध्यापन का सबको अधिकार प्रदान किया।[१९]

स्पष्ट है कि दयानन्द की दृष्टि मात्र स्वदेश के भौगोलिक क्षितिज तक ही सीमित नहीं थी। उनकी राष्ट्रभक्ति में मिथ्या राष्ट्राभिमान को स्थान नहीं है, अपितु उसमें विश्व-बन्धुत्व का सिद्धान्त निहित है। दयानन्द प्रतिपादित चक्रवर्त्ती राज्य की अवधारणा वस्तुतः सार्वभौमिक विश्व-संगठन का ही प्रतीक है । वे सभी देशों की शान्ति, स्वतन्त्रता और उन्नति के पक्षधर थे ।

स्वामी दयानन्द के राजनीतिक दर्शन के विभिन्न अवदानों के आलोक में यह निष्कर्ष निकलता है कि उनका सम्पूर्ण जीवन राष्ट्रमय था तथा उनका राज-दर्शन स्वतन्त्रता और स्वराज्य का दर्शन है । उनके चिन्तन में आर्य-संस्कारों, वेद के स्वाध्याय, आर्य-भाषा (हिन्दी) का समर्थन, स्वराज्य का प्राच्य विज्ञान, स्वदेशी के सद्विचार आदि के सिद्धान्तों की विशुद्ध सरणि प्रवाहित है । दयानन्द के विचारों ने भारत को सुदृढ़ और समुन्नत किया है तथा भविष्य में भी इनसे प्रेरणा प्राप्त होती रहेगी। दयानन्द का चिन्तन स्वप्न-दर्शन न होकर यथार्थ-दर्शन है ।

प्राचार्य, रणवीर रणञ्जय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, अमेठी (उ.प्र.)

याद-टिप्पणियाँ

१. मदनलाल मधु (सम्पादक), समकालीनों की नजर में मार्क्स और एंगल्स, प्रगति प्रकाशन मास्को, पृ० ७१ ।
२. जीवन महता, राजनीतिक चिन्तन का इतिहास, साहित्य भवन आगरा, १९८६ ई०, पृ० ३३० ।
३. प्रशान्त कुमार वेदालंकार, धर्म का स्वरूप, गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली, १९८२ ई०, पृ० १९९ ।
४. सुखवीर सिंह, ए हिस्ट्री ऑफ पोलिटिकल थॉट (भाग-१), रस्तोगी प्रकाशन मेरठ, १९७३ ई०, पृ० १८ ।
५. ओमप्रकाश गाबा, राजनीति विज्ञान-कोष बी० आर० प्रकाशन दिल्ली, पृ० १३५-१३६ ।
६. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थप्रकाश (स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश), आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट दिल्ली, ३३वाँ संस्करण, मार्च १९८६ ई०, पृ० ४०४-४०५ ।
७. महात्मा गाँधी, राष्ट्रभाषा का प्रश्न, राष्ट्रीय साहित्य प्रकाशन दिल्ली, १९४३ ई०, पृ० १ ।
८. रोमाँ रोला, दयानन्द एण्ड आर्यसमाज, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली, १९८३ ई०, पृ० २८ ।
९. वही, पृ० २३ ।
१०. पं० रामगोपाल शास्त्री, महर्षि दयानन्द की राष्ट्रीय विचारधारा, भारतीय लोक समिति दिल्ली, १९६२ ई०, पृ० ७ ।
११. इन्द्र विद्यावाचस्पति, स्वराज्य संग्राम में आर्यसमाज का भाग, सार्वदेशिक प्रेस दिल्ली, पृ० १ ।
१२. हरविलास शारदा, (सम्पादक), दयानन्द कम्मोमोरेशन वाल्यूम, अजमेर, १९३३ ई०, पृ० ९ ।
१३. सत्यदेव विद्यालंकार, राष्ट्रवादी दयानन्द, (इन्दौर तथा नई दिल्ली), १९४६ ई०, पृ० ९० ।
१४. दत्तात्रेय वाब्ले, दि आर्यसमाज, (हिन्दू बिदाउट हिन्दूइज्म), विकास प्रकाशन, नई दिल्ली, १९८३ ई०, पृ० १२६ ।
१५. उमाकान्त उपाध्याय (सम्पादक), महर्षि दयानन्द की देन, आर्यसमाज कलकत्ता, १९७५ ई०, पृ० ६७ ।
१६. स्मारिका अन्तरराष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली, दिसम्बर १९७५ ई०, पृ० २०७ ।
१७. राजेन्द्र जिज्ञासु (सम्पादक), श्रद्धानन्द-ग्रन्थावली, भाग-८, गौविन्दराम हासानन्द, दिल्ली, १९८७ ई०, पृ० ७३ ।
१८. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ-प्रकाश, भूमिका, पृ० ३ ।
१९. स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती (सम्पादक), महर्षि दयानन्द के स्वप्नों का भारत, डॉ० रत्नकुमारी स्वाध्याय संस्थान इलाहाबाद, १९८५ ई०, पृ० ३२ ।

ఏమి పని ఇది మిత్రమా !

- ఎం.వి.ఆర్. శాస్త్రి

నాగపూర్ కాంగ్రెసు సభల్లో శ్రద్ధానంద స్వామి జబ్బుపడ్డాడు. అక్కడి నుంచి ఏకాఎకి కాంగ్డీ గురుకులానికి వెళ్లి **1921** సంవత్సరం మొదటి మూడూ నెలలూ మంచానికి అతుక్కునే ఉన్నాడు. ఆ తరవాత, లేచి కాస్త పనులు చేసుకోవటానికి డాక్టర్లు అనుమతించారు. ఇంకా కొన్ని నెలలపాటు ప్రయాణాలు చేయకూడదు. ఎక్కువ దూరం నడవకూడదు అని ఆంక్షలు పెట్టారు. కాని మే నెల మొదట్లో మోతీలాల్ నెహ్రూగారి అమ్మాయి పెళ్లికి అలహాబాద్ వెళ్లక తప్పింది కాదు.

స్వామీజీ ఎక్కిన పంజాబ్ హౌరా మెయిల్‌లోనే మహమ్మదలీ కూడా ప్రయాణిస్తున్నాడు. ఆయనా అలహాబాద్ పెళ్లికే వెళుతున్నాడు. ఇద్దరూ ఒకే కంపార్టుమెంటులో తారసపడ్డారు. సంభాషణ సహజంగానే నాడు అందరి నోళ్లలో నానుతున్న వివాదం మీదికి మళ్లింది.

అప్పట్లో భారత ప్రభుత్వంలో హోం మెంబరు సర్ విలియం విన్సెంట్. మహమ్మదలీ బ్రిటిషు సర్కారుకు వ్యతిరేకంగా కాబూల్ గవర్నమెంటుతో మంతనాలు సాగిస్తున్నాడనటానికి తన దగ్గర డాక్యుమెంటరీ రుజువులున్నాయని ఆయన లెజిస్లేటివ్ అసెంబ్లీలో ప్రకటించాడు. దానికి కొద్ది రోజుల ముందు సిఐడి వారి చేతుల్లబ్లి పడ్డ మహమ్మదలీ లేఖను సర్ తేజ్‌బహదూర్ సప్రూకు ఆయన చూపించినట్టూ వార్తలొచ్చాయి. అది మహమ్మదలీ రాసిందా కాదా అన్నది తేల్చివేయడానికి వీలుగా ఆ లేఖ ఏదో నిజంగా మీ దగ్గరుంటే బయట పెట్టండి అని శ్రద్ధానందస్వామి ప్రభుత్వాన్ని సవాలు చేశాడు. దానికి సర్కారు నుంచి స్పందన లేదు.

రైలు సంభాషణలో ఈ ఊసులు ప్రస్తావనకొచ్చాయి. 'నేనా? లేఖ రాశానా?' అని ఆశ్చర్యం వ్యక్తం చేసి, 'ఇంతకీ ఉత్తరం ఏ భాషలో రాశానట?' అని అడిగాడు మహమ్మదలీ. 'పర్షియన్ భాషలోనట' అన్నాడు స్వామీజీ. 'ఐతే అది నేను రాసింది కాదు. ఎందుకంటే నాకు అరబిక్ రాదు. పర్షియన్‌లో ఒక్క ముక్కా రాయలేను' అని బదులిచ్చాడు మౌలానా మహమ్మదలీ.

ఈసారి ఆశ్చర్యపోవటం శ్రద్ధానంద వంతు అయింది. అరబిక్, పర్షియన్ భాషలు రెండూ రాని ఈయన మౌలానా ఎలా అయ్యాడబ్బా?

(అనంతర కాలంలో ఆ శంక తీరింది. అమృత్‌సర్ కాంగ్రెసు మీటింగులో హిందూ నాయకులకు పేరుపేరునా ఇస్లాం సందేశం వినిపించి, వారిచేత మతం మార్పించటానికి గొప్ప కృషి చేసినందుకు గుర్తింపుగా అలీగారికి 'మౌలానా' బిరుదును ప్రదానం చేసినట్టు ముస్లిం మత వర్గాల ద్వారా శ్రద్ధానందకు తెలిసింది. 'అమృత్‌సర్ సభలో నేనూ ఉన్నా కదా, ఈయన అంతలా మతబోధ చేయటం నేనెప్పుడు చూడలేదే' అని డౌటొచ్చి ఒకవేళ మీరేమైనా విన్నారా? అని మోతీలాల్ నెహ్రూ, మాలవీయ, సి.ఆర్.దాస్ లాంటి పెద్దలను స్వామి వాకబు చేశాడు. 'అలాంటిదేం లేదే' అన్నారు వారు. ఆఖరికి మహాత్మాగాంధిగారు కూడా తన మీదా అలాంటి మతమార్పిడి ప్రయత్నమేదీ చిన్న అలీ చేయలేదన్నాడు. 'ఔరా మహమ్మదలీ!! ఇదా నీ 'మౌలానా బిరుదు బండారం' నవ్వుకున్నాడు స్వామీజీ).

అసలు విశేషం అది కాదు.

Moulana Muhammed Ali complained about political leaders taking him to task for sending a wire to the Sultan of Kabul, urging him not to make peace with the British Government. I too, urged that it was not a wise step that he had taken. He kept quiet at the time but when we reached the Anand Bhavan (Pandit Nehru's Palace), brother Muhammad Ali took me aside and taking out a paper from his hand-bagh, gave a draft of a telegram to me to read. What was my astonishment when I saw the draft of the self same telegram in the peculiar handwriting of the Father of the non-co-operation movement.

[*Inside Congress,* Swami Shraddhanand, p.126**]**

((బ్రిటిషు ప్రభుత్వంతో సంధి చేసుకోవద్దంటూ కాబూల్ సుల్తాన్‌కు తానేదో తంతి పంపాడని రాజకీయ నాయకులు తనను తప్పు పడుతున్నారేమిటని మహమ్మదలీ రైలు కబుర్లలో ఫిర్యాదు చేశాడు. మీరు చేసింది మంచి పని కాదు అని నేనూ నిరసించాను. ఆయన అప్పుడు ఏమీ అనలేదు. పండిట్ నెహ్రూగారి ఆనందభవన్ ప్రాసాదాన్ని చేరాక మహమ్మదలీ నన్ను పక్కకు తీసుకెళ్లి చేతి సంచిలోంచి ఒక కాగితం తీసి చూపించాడు. ఇదే టెలిగ్రాం రాతప్రతి; చదవండి - అన్నాడు. చూద్దును గదా, నేను నిర్ఘాంతపోయాను. అహింసాత్మక అసహాయోద్యమం కన్నతండ్రి గారి విలక్షణమైన చేతిరాత అది!)

వింటనే ఎవరికైనా వొణుకు పుట్టాల్సిన మాటలివి. సత్యాన్ని, నియమబద్ధ విశుద్ధ వర్తనను పూటకు పదిసార్లు నొక్కి చెబుతూ తన జీవితాన్ని 'సత్య ప్రయోగశాల'గా వర్ణించిన అహింసా ప్రవక్త ఏమిటి? దేశాన్నేలుతున్న ప్రభుత్వానికి వ్యతిరేకంగా, కుట్రపూరితంగా, విదేశీ పాలకుడితో మంతనాలాడటమేమిటి? మన కాలంలో ఏ కాశ్మీరీ టెర్రరిస్టు గ్రూపలో, దేశంలోని మరో జిహాదీ గుడారమో భారత ప్రభుత్వానికి వ్యతిరేకంగా పాకిస్తాన్‌తో సంబంధాలు పెట్టుకుని ఐ.ఎస్.ఐ. ఏజంట్లుగా పని చేస్తున్నారంటే అది దేశద్రోహమని అంటున్నాము కదా? చైనా యుద్ధ కాలంలోనో, అంతకుముందో దేశంలో కొన్ని కమ్యూనిస్టు వర్గాలు కిమ్యూనిస్టు చైనాకు విధేయులై, రహస్య సంబంధాలు నెరపటాన్ని సైద్ధాంతికపరంగా వారు ఎంత సమర్థించుకునేందుకు వీలున్నా, అది జాతి వ్యతిరేక విద్రోహంగా మనవారు ఎంత సమర్థించుకునేందుకు వీలున్నా, అది జాతి వ్యతిరేక విద్రోహంగా మనవారు ముక్తకంఠంతో తెగనాడారు కదా? మరి 'జాతిపిత' అని ఎవరిచ్చారో తెలియని బిరుదు తగిలించబడ్డ మహాత్ముడు చేసిన పని అలాంటిది కాదా ?

అఫ్ఘాన్ సుల్తాన్‌కు గాంధీగారు ఎలాంటి సందేశం పంపారో మనకేమి తెలుసు? 'సత్యమునే పలుకుము; అహింసను ఆచరించు; యుద్ధాలు కట్టిపెట్టు; మా జోలికి రాకు; ముక్కు మూసుకుని తపస్సు చేసుకో' లాంటి మంచి మాటలేమైనా చెప్పి ఉండొచ్చు కదా అని అనుకుందామా? 'అలీ సోదరులు సుల్తాన్‌కు

సందేశం పంపి ఉన్నట్లయితే, నేనూ అలాంటి సందేశమే పంపుతాను. నువ్వు యుద్ధానికి వస్తే నిన్ను వెనక్కి తరిమేందుకు మా ప్రభుత్వంతో ఏ భారతీయుడూ సహాయపడకుండా నా శాయశక్తులా ప్రయత్నిస్తానని అందులో చెబుతా'నని అలహాబాద్ జిల్లా మహాసభలో ఇంతకుముందు ఉటంకించిన మాటలు గాంధీగారు అనడాన్నిబట్టే - ఆయన స్వహస్తాలతో రాసి పంపిన రహస్య టెలిగ్రాం ఎలాంటిదై ఉంటుందో నిస్సందేహంగా బోధపడటం లేదా? అలీ సోదరులు అఫ్గాన్ అమీర్‌కు పంపినట్టుగా అందరూ భావిస్తూ, తెగ తిట్టిపోస్తున్న తంతి సందేశం నిజానికి మహాత్ముడే స్వయంగా రాసి, మహమ్మదలీ చేత ఇప్పించాడన్న గుట్టు ఎప్పటికైనా బట్టబయలు కావచ్చని ఊహించే, ముందరి కాళ్లకు బంధం వేసినట్టు అలహాబాద్ సభలో ఆ ముందస్తు ప్రకటన దేశాడన్నది స్పష్టమే కదా! విదేశీయులు దండయాత్ర చేస్తే దేశాన్ని రక్షించుకోవటం ఏ ప్రభుత్వానికైనా అవశ్య కర్తవ్యం కాగా, దాని ధర్మం దాని నిర్వర్తించనివ్వకుండా, దేశవాసులను తాను వెనక్కి లాగి, అడ్డుకుంటానని అనటం రాజ్యద్రోహం కాకపోతే మరేమిటి?

ప్రశస్తమైన చరిత్ర వెల్లవేతల కారణంగా మన తరాలకు తెలియకుండా పోయినా, ఆ కాలంలో అది అందరూ అనుకున్నమాటే. గాంధీకి వీరభక్తులు, అనుంగు సహచరులు, అంతేవాసులు సైతం ముక్కున వేలేసుకునేట్టు చేసిన దుస్సాహసమే అది. ఆ కాలాన ఎన్నో పత్రికలు ఘాటుగా, దుయ్యబట్టిన రహస్య కుతంత్రమే అది. ఎవరిదాకానో ఎందుకు? గాంధీకి అనుంగు మిత్రుడు... దక్షిణాఫ్రికా రోజుల నుంచి ఆయన వెంట ఉండి. 'చార్లీ' అని ఆప్యాయంగా పిలిపించుకుని, ఆయనతోబాటే ఇండియాకు వచ్చేసి, వెన్నంటి ఉన్న సి.ఎఫ్.ఆండ్రూస్ అంతటి వాడే 'ఏమి పని ఇది మిత్రమా' అని ఆక్షేపిస్తూ ఉత్తరం రాశాడు. ఆ సంగతి 18-5-1921 తేదీ **'యంగ్ ఇండియా'** పత్రికలో గాంధీగారే బయటపెట్టి, తన నిర్వాకాన్ని వింత రీతుల్లో సమర్థించుకోచూశాడు ఇలా;

Is not my article on "The Afghan Bogey', an invitation to the Afghans to invade the Indian border, and thus do I not become a direct party to violence? Thus asks Mr. Andrews. My article was written for Indians and for the Government. I do not believe the Afghans to be so foolish as to invade India on the strength of my article. But I see that it is capable to bearing the interpretation put upon it by Mr. Andrews. I therefore hasten to inform all whom it may concern that not only do I not want to invite the Afghans or anybody to come to our assistance, but am anxious for them not to come to our assistance. I am confident of India's ability to settle with the Government without extraneous help.

[*The Collected works of* Mahatma Gandhi, vol.23, p.161]

(నేను రాసిన 'అఫ్గాన్ బూచి' వ్యాసం భారత సరిహద్దులపై దాడి చేయమని అఫ్గాన్లకు ఆహ్వానం కాదా ? తద్వారా నేను హింసకు నేరుగా బాధ్యుడిని కావటం లేదా ? అని ఆండ్రూస్ అడుగుతున్నాడు. నా వ్యాసం భారతీయుల కోసం రాసింది. అఫ్గాన్లు నేను రాసిన వ్యాసాన్ని పట్టుకుని దానిమీదే ఆధారపడి ఇండియామీద దాడి చేసేంత మూర్ఖులు అని నేను నమ్మను. కాని ఆండ్రూస్ చెప్పిన ప్రకారం అర్థం తీయడానికి నా వ్యాసం ఆస్కారం ఇచ్చిందని నేను గ్రహించాను. అందుకని దీనికి సంబంధించిన సమస్తమైన వారికీ నేను తెలియజేసేది ఏమనగా - అఫ్గాన్లను ఆహ్వానించాలని నేను కోరుకోవటం లేదు. మన సాయానికి రమ్మని ఇంకెవరిని కూడా నేను ఆహ్వానించదలచటం లేదు. వారెవరూ మనకు సహాయంగా రాకూడదనే నేను తహతహలాడుతున్నాను. బయటి నుంచి సహాయం లేకుండానే ప్రభుత్వంతో తేల్చుకోగలిగిన శక్తి భారతదేశానికి ఉన్నదని నేను విశ్వసిస్తున్నాను)

నేను రమ్మన్నా కదా అని అఫ్గాన్లు మూర్ఖంగా పరిగెత్తుకొస్తారా ఏమిటి? ఏదో మన వాళ్ల కోసమే అలా అన్నా! అయినా మావాడు అంవీన్నటు, దాని దేశం మీద దాడికి అఫ్గాన్లను ఆహ్వానించటంగా అర్థం చేసుకోవటానికి వీలుంది. కాబట్టి చెబుతున్నా అలాంటి ఉద్దేశమేదీ నాకు లేనే లేదని - అంటున్నాడు యథార్థ వాక్కుల సత్య ప్రవక్త. మన వ్యాసం చదివి, దానే ఆసరాగా చేసుకుని ఏ చైనా వాడూ, ఏ పాకిస్తాన్ వాడూ దేశం మీద దండయాత్రకు రాడు కాబట్టి - 'వీరు మాపై దండయాత్ర చేయండి. మీకు వ్యతిరేకంగా ఎవరూ పని చేయకుండా మా వాళ్లను మేము వెనక్కి లాగుతాం' అని ఇవాళ ఏ బుద్ధిహీనుడైనా విదేశీ పాలకులను ఉసిగొలుపుతూ పత్రికలో వ్యాసం రాయవచ్చా? అది దేశానికి ద్రోహం కాదా?

సరే! వేరే ఉద్దేశం ఏమీ లేదు. అఫ్గాన్లను దాడికి పిలవాలని గాంధీ అనుకోలేదు. మన మీదికి ఎవరూ రాకూడదనే ఆయనే గాఢ్ఠిగా కోరుకున్నాడు. నమ్ముదాం. కాని కర్మంచాలక ఏ అఫ్గాన్ వాడో దండయాత్ర చేస్తే...? వాడిని వెళ్లగొట్టేందుకు బ్రిటిషు సర్కారు పోరాడుతుంటే... మహాత్ముడి ఏమి చేస్తాడు? దేశాన్ని కాపాడేందుకు బ్రిటిషు ప్రభుత్వంతో సహకరిస్తాడా? ప్రజలను సహకరించనిస్తాడా?

లేదట. **యంగ్ ఇండియా** పత్రికలో 18-5-1921న పై వివరణ ఇచ్చిన తరవాత మహాత్ములవారి నోట జాలువారిన మాటలివి:

I would rather see India perish at the hands of Afghans than purchase freedom at the cost of her honour. To have India defended by an unrepentant Government that keeps the Khilafat and the Punjab wounds still bleeding, is to sell India's honour.

[*The Collected works of* Mahatma Gandhi, vol.23,p.214]

(తన గౌరవాన్ని మూల్యంగా చెల్లించి స్వేచ్ఛ కొనుక్కునేకన్నా ఇండియా అఫ్గాన్ల చేతిలో చావడమే మంచిది. ఖిలాఫత్, పంజాబ్ గాయాలను ఇంకా నెత్తురోడేట్టు చేస్తూ, పశ్చాత్తాపపడని ప్రభుత్వంచేత ఇండియా రక్షించబడటం అంటే, ఇండియా పరువును అమ్మడమే.)

విదేశాల్లో ఎక్కడో తగలేయబడ్డ ఖలీఫా పీఠాన్ని ఇంగ్లండు రక్షించలేదు కనుక, పంజాబ్‌లో ఘోరాలు చోసింది కనుక బ్రిటిషు ప్రభుత్వం పాపి. అలాంటి పాపి చేతులతో దేశాన్ని రక్షించుకోవటం గాంధీగారి దృష్టిలో పరువు తక్కువ. కాబట్టి విదేశీయులతో యుద్ధం జరుగుతున్న సమయాన దేశాన్నేలే ప్రభుత్వంతో చెయికలపకుండా, దేశాన్ని నాశనం కానివ్వటమే మేలు అని గాంధి ఉవాచ.

పైన ఉటంకించిన చారిత్రక సాక్ష్యాలను, ఘటనా క్రమాన్ని గమనిస్తే దేశంపై దాడికి అఫ్గాన్ సుల్తాన్‌ను బుద్ధిపూర్వకంగానో, అసంకల్పితంగానో గాంధీ మహాశయుడు ప్రోత్సహించిన మాట నిజమేనని తేలుతుంది. అఫ్గాన్లను తాను ఆహ్వానించినట్టుగా తన

మాటలను అర్థం చేసుకోవడానికి తాను ఆస్కారం ఇచ్చిన సంగతీ మహాత్ముడే ఒప్పేసుకున్నాడు. విదేశీ సుల్తానుకు మహమ్మదలీ పంపిన ద్రోహపూరితమైన టెలిగ్రాం కూడా ఈ మహానుభావుడు రాసి పెట్టిందేననీ శ్రద్ధానందస్వామి బయట పెట్టాడు. అదీ తన మరణానంతరం వెలువడిన ఏ గ్రంథంలోనో కాదు. తన జీవిత కాలంలోనే, గాంధీగారి ఎరుకలోనే **'లిబరేటర్'** పత్రిక 29-7-1926 సంచికలో గాంధీ గుట్టును శ్రద్ధానందస్వామి రట్టు చేశాడు. ఆయనన్నది అబద్ధమైతే, గాంధీగారు వెంటనే దాన్ని ఖండించి ఉండాల్సింది. ప్రతి చిన్న విషయాన్నీ పట్టుకుని, పత్రికలో, ప్రసంగాల్లో సుదీర్ఘంగా సాగదీసే పెద్దమనిషి, స్వామీజీ అన్నదానికి నోరు మెదిపితే ఒట్టు. సిగ్గుచేటు ప్రకరణం క్రమేణా మరపున పడ్డాక, శ్రద్ధానంద గతించి పద్నాలుగేళ్ల గడిచాక, టెలిగ్రాం సంగతి ఎవరో గుర్తుచేసి, రెట్టించి అడిగితే మహాత్మాజీ ఇలా సెలవిచ్చాడు.

"I do not remember having drafted any telegram on behalf of Maulana Mahomed Ali to the then Amir. The late Swamiji never referred the matter to me for confirmation." **[Harijan,** 10.2.1940**]**

(మౌలానా మహమ్మదాలీ పసుపున నేను టెలిగ్రాం ముసాయిదా తయారు చేసినట్టు నాకు గుర్తు లేదు. మరణించిన స్వామీజీ దాని గురించి ధ్రువీకరణ కోసం ఏనాడూ నన్ను అడగలేదు.)

సమయానుకూలంగా మాటలు మార్చటంలో కన్యాశుల్కం గిరీశం కంటే గాంధీగారు గొప్పవాడు!

అంతరిస్తున్న జాతి

ఇప్పటికి ఇరవై రెండు అధ్యాయా లయ్యాయి. అసలు విషయంలోకి ఇంకా వెళ్లనే లేదు.

జాతి తనను తాను మరచి, చిత్రమైన చిత్తభ్రాంతితో పడి, ధర్మానికి దూరమై, అజ్ఞాన తిమిరంలో కొట్టుమిట్టాడుతున్న నేటి అభారతీయ, ఆధార్మిక సంధియుగంలో స్వామి శ్రద్ధానంద పేరు చాలా మందికి తెలియదు. తెలిసిన కొద్దిమందిలో చాలామంది ఆయనను 'శుద్ధి' ఉద్యమం నడిపి, మహమ్మదీయుల ఆగ్రహానికి గురై, ఒక ముసల్మాన్ ముష్కరుడి చేతిలో హతమైన ఆర్యసమాజ్ నాయకుడిగానే గుర్తు పెట్టుకుంటారు. ఆయన ప్రస్తావన ఎక్కడ వచ్చినా అదే మాట చెబుతూంటారు. ఎందుకంటే అంతకు మించి ఆయన గురించి వారికి తెలియదు కనుక. తెలుసుకుందామని ఉన్నా - పథకం ప్రకారం జరిగిన చరిత్ర తిరగమోతలో ఆయన ఆనవాళ్ల చాయలు లీలగానైనా ఎక్కడ పొడగడతాయో పోల్చుకునే కోరిక, తీరిక లేకపోవడం వల్ల.

అవగాహన పరిమితమైన అసంపూర్ణ ప్రజ్ఞావంతుల నోట 'శుద్ధి', 'హత్య'ల మాట పదేపదే విన్న జనానికి శ్రద్ధానంద స్వామి అంటే మతమార్పిడులకు పాల్పడి, అన్య మతస్థులకు ఒళ్లు మండించి, బలవన్మరణాన్ని కొని తెచ్చుకున్న హిందూ తీవ్రవాద మత నాయకుడన్న అభిప్రాయం సహజంగా కలుగుతుంది. అలాంటి మతవాది కాబట్టే మతాతీత లౌకిక విధానాన్ని నమ్మే ఆధునిక సెక్యులర్ శకారులను శ్రద్ధానంద మీద అనన్య పూజ్యభావం లేకపోయిందన్న అపోహ తలెత్తుతుంది. దాని తొలగించే ప్రయత్నంలోనే శ్రద్ధానంద స్వామి విలక్షణ జీవితంలోని వివిధ పార్శ్వాలను పరామర్శించవలసి వచ్చింది.

సంకుచిత మతతత్వం లేని విశాల హృదయులు... నీతికి, నిజాయతీకి ప్రతిరూపమైన ఆదర్శమూర్తులు అని అందరూ పూజించే మహాత్ముల బోలుతనం బయటపడితేగానీ - వారు నిరాదరించి, వక్రంగా చిత్రించిన మహాపురుషుడి విశిష్ట వ్యక్తిత్వం అర్థంకాదు. ఏది నకిలీయో నిరూపిస్తే తప్ప ఏది అసలో తేటపడదు. అందుకే అసలైన కథానాయకుడి కంటే సిసలైన ఖల నాయకుడి ప్రస్తావన ఇప్పటిదాకా ఒకింత ఎక్కువగా వచ్చింది.

హిందూ - ముస్లిం ఐక్యతకు గాంధీ కంటే ముందు నుంచే నిబద్ధుడై, గాంధీకంటే ఎన్నో రెట్లు మిన్నగా మహమ్మదీయ వర్గాల విశ్వాసాన్ని చూరగొన్న శ్రద్ధానంద సన్యాసి అనంతర కాలంలో అదే ముస్లిం సమాజానికి కంటగింపు అయ్యాడు. డెబ్బై ఏళ్ల తన జీవితకాలంలో అరవై ఏడేళ్ల పర్యంతం జాతీయోద్యమ ప్రధాన స్రవంతిలో భాగమై, కాంగ్రెసు ముఖ్యుల్లో ఒకడిగా ఎంచబడ్డ స్వామి చివరి మూడేళ్లలో భిన్నమైన భూమిక వహించాడు. చిరకాల చరిత్రలో ఎవరూ తలపెట్టని మహాకార్యానికి జీవితాన్ని అంకితం చేశాడు. కడకు తన జీవితాన్నే బలి ఇచ్చాడు.

దానికి పెద్ద పూర్వరంగం ఉంది.

హిందువులు, ముస్లింలు ఏకమై ఎదురుతిరిగితే భారతదేశంలో తనకు పుట్టగతులుండవన్న యథార్థం 1857 తొలి స్వాతంత్ర్య సంగ్రామంలో చావుతప్పి కన్నులొట్టపోయి అదృష్టంకొద్దీ బయటపడిన తరువాత తెల్లదొరతనానికి ఎరుకపడింది. స్వామి దయానంద సరస్వతి పూనికతో పుష్కరకాలం పాటు ఉజ్వలంగా సాగిన గోరక్షణ ఉద్యమం తొలి దశలో... హిందువులతో ముసల్మాన్లు చేతులు కలిపి తమకు చెమటలు పట్టించాక - ఎలాగైనా వారిని విడదీసి, వైషమ్యాలు పెంచితేగాని తమకు మనుగడ ఉండదని తెల్లవారికి మరీ రూఢీ అయింది. 'విభజించి పాలించే' ఉద్దేశంతోనే మహమ్మదీయులను చేరదీసి, అడక్కుండానే తాయిలాలు ఇచ్చి, రాయితీలూ, ప్రత్యేక సౌకర్యాలూ ఎరవేసి జాతీయోద్యమ స్రవంతి నుంచి పరిపరి విధాల ముసల్మాన్లను వెనక్కి లాగసాగారు. వివేకానంద, బంకించంద్ర వంటి మహనీయుల స్ఫూర్తితో హిందువుల్లో జాతీయ భావం గట్టిపడి, పోరాట దీక్ష పెరిగేకొద్దీ ముస్లిం వర్గాన్ని తమవైపు తిప్పుకునేందుకు నానా కుతంత్రాలు పన్నారు. విభజించి పాలించే దుష్ట విధానంలో భాగమే కర్జన్‌దొరర పుణ్యం కట్టుకున్న బెంగాల్ విభజన.

20వ శతాబ్దం ఆరంభం మవరకూ బెంగాల్ రాష్ట్రంలో ఇప్పటి బంగ్లాదేశ్, మన పశ్చిమబెంగాల్, బీహార్, ఒరిస్సా రాష్ట్రాలు, చోటా నాగపూర్ ప్రాంతం కలిసి ఉండేవి. దాని వైశాల్యం 1,90,000 చదరపు మైళ్లు. 1901లో జనాభా 8 కోట్లు. జాతీయోద్యమానికి ఆ రాష్ట్రం పట్టుగొమ్మ. మహమ్మదీయుల సంఖ్య బాగా ఎక్కువ అయినా మొదటి నుంచీ అక్కడ హిందువులే మెజారిటీ. 1872 జనాభా లెక్కల్లో ఆ రాష్ట్ర ముస్లిం జనాభా కోటీ అరవై ఆరు లక్షలు కాగా హిందువుల సంఖ్య కోటీ డెబ్బై ఒక లక్షలు. అంటే ఐదు లక్షలు ఎక్కువ. నాలుగు దశాబ్దాలు తిరిగేసరికి తారతమ్యం ఎంతలా తలకిందులైందంటే - 1911 జనాభా లెక్కలకల్లా బెంగాల్‌లో ముస్లిం జనాభా 52.3 శాతానికి దూసుకుపోగా హిందువుల సంఖ్య 45.2 శాతానికి దిగజారిపోయింది. విపరీతమైన ఈ తేడా వెనుక తెల్లవారు కట్టుకున్న పుణ్యం చాలా ఉంది.

త్వరితగతిన పెరుగుతున్న హిందూ ఉద్ధతికి అడ్డుకట్టవేసి ముస్లిం మెజారిటీ రాష్ట్రాన్ని తయారుచేయటానికే విభజనను తలపెట్టినట్టు

లార్డ్ కర్జన్ బాహాటంగానే చెప్పాడు. ప్రజలు ఎంత ప్రతిఘటించినా లెక్కచేయక బ్రిటిషు వారు 1905 అక్టోబరు 16న అడ్డగోలుగా చేసిన బెంగాల్ విభజనతో హిందువులు తూర్పు రాష్ట్రంలో మతపరంగా, పశ్చిమ రాష్ట్రంలో భాషా వరంగా మైనారిటీలయిపోయారు. సామాజికంగా, సాంస్కృతికంగా పేరెన్నికగన్న బెంగాలీల సంఘీభావాన్ని దుర్మార్గపు విభజన దెబ్బతీసింది. దానిని నిరసిస్తూ దేశమంతటా పెల్లుబికిన మహోద్యమానికి తలవంచి తెల్లదొరతనం 1911లో విభజననైతే రద్దు చేసింది. కాని సరికొత్త పాత రాష్ట్రానికి సరిహద్దులు నిర్ణయించే సందర్భాన చూపిన చేతివాటం మూలంగా ముస్లింలది సంఖ్యాపరంగా మెజారిటీ అయింది. జనాభాలో సహజంగా ఉండే పెరుగుదలకు తోడు హిందూ స్త్రీల అపహరణలూ, బలాత్కారాలకు తెల్లవారి పరోక్ష ప్రోద్బలాలు, బలవంతపు మతమార్పిళ్లు, మతం మారితే పొందే ప్రత్యేక హక్కుల గురించి ఎడతెగని ప్రచారాలు కూడా దీని వెనక పనిచేశాయి.

ఉదాహరణకు బెంగాల్ విభజనకు వ్యతిరేకంగా ప్రజా ఉద్యమం ప్రచండంగా నడుస్తున్న సమయాన 1906 మే 25న తూర్పు బెంగాల్ లెఫ్టినెంట్ గవర్నర్ సర్‌ఫుల్లర్ ఒక సర్క్యులర్ జారీ చేశాడు. ప్రభుత్వోద్యోగాల్లో గణనీయ భాగాన్ని ఇకపై మహమ్మదీయులకు మాత్రమే కేటాయిస్తామన్నాడు. ప్రతిభ, యోగ్యత ఉన్న హిందువులు అందుబాటులో ఉన్నా సరే, వారికి రాకుండా కనీసార్హత ఉంటే చాలు ముస్లిం అభ్యర్థులను మాత్రమే ఈ కోటా కింద ఎంపిక చేయాలని, సర్క్యులర్‌లో నిర్దేశించాడు. కరువు కాటకాలతో అలమటిస్తున్న కాలంలో మతం మారితే కొలువు దొరుకుతుందన్న ఆశతో చాలామంది హిందువులు మతాభిమానం చంపుకుని మహమ్మదీయ మతం పుచ్చుకున్నారు.

మహమ్మదీయుల పట్ల సర్కారీ పక్షపాతం ఎంత దూరం వెళ్లిందో 1907 సూరత్ కాంగ్రెసు అధ్యక్షోపన్యాసంలో రాస్ బిహారీ ఘోష్ విపులంగా వివరించాడు. ఉదాహరణకు ఆయన ఎరుకలో ఒక సెషన్సు జడ్జి సాక్షును హిందువులు, మహమ్మదీయులు అని రెండు తరగతులుగా విభజించేవాడట. మహమ్మదీయుల సాక్ష్యాలకు మాత్రమే విలువ ఇచ్చేవాడట !

ఇదే కాలంలో మాంచెస్టర్ గార్డియన్ పత్రిక ప్రతినిధిగా హెచ్.డబ్ల్యు. నెవిన్సన్ ఇండియాలో పర్యటించాడు. తాను కన్నదీ, విన్నదీ గుదిగుచ్చి 1908లో The New Spirit in Indian అనే గ్రంథాన్ని వెలువరించాడు. ఈ దేశంలో తాను ఎక్కడికి వెళ్లినా ఇంగ్లీషు ఆఫీసర్లు తగవు వచ్చినప్పుడు తప్పొప్పులతో నిమిత్తం లేకుండా మహమ్మదీయులను వెనకేసుకు రావటం గమనించినట్టు అందులో రాశాడు.

దేశాన్నేలే వారే పక్షపాతులైనప్పుడు వివక్షకు గురైన వర్గాల్లో అభద్రతా భావం పెరగటం, దాని నుంచి బయటపడేందుకు ఏలినవారికి అభిమానపాత్రమైన శ్రేణుల్లో చేరటం మేలన్న అభిప్రాయం కలగటం సహజం. నిజానికి ఈ రకమైన ధోరణి బెంగాల్ విభజనకు ముందే మొదలైంది. 1872లో ముస్లింలకంటే హిందువుల జనాభా 5 లక్షలు ఎక్కువగా ఉన్న బెంగాల్‌లో రెండు దశాబ్దాలు నిండకుండా పరిస్థితి మౌలికంగా మారి ముస్లింల జన సంఖ్య హిందువుల కంటే పదిహేను లక్షలు ఎక్కువ అయింది. ఈ పరిణామాన్ని 1891 జనాభా గణాంకాలను తయారుచేసిన C.J.O.'Donnell తన నివేదికలో అనేక కోణాల నుంచి విశ్లేషించాడు. ఇతర మతాల వారు తమ వారిని లాక్కుంటుంటే నిర్లిప్తంగా ఉండటం, అన్యమతాల వారిని తమలోకి ఆకర్షించేందుకు ఎట్టి ప్రయత్నమూ చేయకపోవటం హిందువుల బలహీనతగా డోనెల్ పేర్కొన్నాడు. ఈ ధోరణి ఇలాగే సాగితే కొన్ని శతాబ్దాల్లో హిందూ జాతి మొత్తం తుడిచిపెట్టుకు పోగలదని కూడా తన నివేదికలో హెచ్చరించాడు.

జనాభా గణాంక నివేదికలు చూస్తూ పోయాక, నిపుణుల మొట్టి కాయలు పడ్డాక, ముస్లింలలో వేర్పాటుతత్వాన్ని పెంచేందుకు, హిందువులకు వ్యతిరేకంగా వారిని తమవైపు చేరదీసేందుకు బ్రిటిషు పాలకుల పన్నాగాలు అర్థమయ్యాక, తమ కాళ్లకింది నేల క్రమంగా కుంచించుకు పోతున్నదన్న సంగతి హిందూ ప్రముఖులకు మెల్లిగా అర్థమైంది. ముస్లింలు మైనారిటీగా ఉన్నప్పుడే... సంఖ్యాబలంతో నిమిత్తం లేకుండా తమ చారిత్రక ఆధిక్యాన్ని, రాజకీయ ప్రాధాన్యాన్ని గుర్తించి, హిందువులకు తీసిపోని విధంగా అన్ని రంగాల్లో తమకు పెద్దపీట వేయాలన్నా డిమాండు అంతకంతకూ అధికమవుతున్నది. ఇక బెంగాల్‌లోవలె ముస్లింలదే మెజారిటీ అయితే దేశంలో వారి దూకుడుకు, తమ అగచాట్లకు అంతుండదన్న భయం హిందూ వర్గాల్లో పొడసూపింది.

దానికి అక్షర రూపమే లెఫ్టినెంట్ యు.ఎన్. ముఖర్జీ **Dying Race** (అంతరిస్తున్న జాతి) పేరిట 1909లో వెలువరించిన చిరుపొత్తం. సుప్రసిద్ధ జాతీయ నాయకుడు సురేంద్రనాథ్ బెనర్జీకి ఈ ముఖర్జీ స్వయానా అల్లుడు. మామగారి సంపాదకత్వంలో వెలువడే 'బెంగాలీ' పత్రికలో దీన్ని మొదట సీరియల్‌గా ప్రచురించాడు.

బెంగాల్ రాష్ట్రంలో ముస్లిం జనాభా ముప్ఫై ఏళ్లలో 33 శాతం పెరగగా హిందువుల సంఖ్య 17 శాతం మాత్రమే పెరిగిందని గణాంకాల ఆధారంగా నిరూపించి, ఈ విపరీత వ్యత్యాసానికి కారణభూతమైన వివిధానేక అంశాలనూ ముఖర్జీ సాకల్యంగా చర్చించాడు. విదేశీయుడైన O'Donnel ఏనాడో చేసిన హెచ్చరికను సీరియస్‌గా తీసుకుని, ముంచుకొస్తున్న ప్రమాదాన్ని గుర్తించి హిందువులు సకాలంలో మేలుకొనకపోతే అమెరికా, న్యూజిలాండుల్లోని ఆదిమ తెగల్లాగే హిందూ జాతి కూడా క్రమేణా అంతరించిపోగలదని హెచ్చరిస్తూ ముఖర్జీ తన పుస్తకాన్ని ఇలా ముగించాడు.

The Mohamedans have a future and they believe in it - we Hindus have no conception of it. Time is with them - time is against us. At the end of the year they count their gains, we calculate our losses. They are growing in number, growing in strength, growing in wealth, growing in solidarity. We are crumbling to pieces. They look forward to a United Mohamedan World. We are waiting for our extinction.

('మహమ్మదీయులకు ఒక భవిష్యత్తు ఉంది. దాన్ని వారు నమ్ముతారు. హిందువులమైన మనకు అలాంటి భావన ఏదీ లేదు. కాలం వారికి అనుకూలం. మనకేమో ప్రతికూలం. సంవత్సరం తిరిగేసరికి వారు లాభాలను లెక్కపెడతారు. మనం నష్టాలను లెక్కపెట్టుకుంటాం. వాళ్లు సంఖ్యలో, బలంలో, సంపదలో, సంఘీభావంలో పెరుగుతూ పోతున్నారు. మనం ముక్కలవుతున్నాం. వారు సమైక్య మహమ్మదీయ ప్రపంచం కోసం ఎదురుచూస్తున్నారు. మన అంతర్ధానానికి మనం వేచి ఉన్నాం') .. **శేషము 18వ పేజీలో**

కుటుంబం సుఖంగా ఉండాలంటే

ప్రపంచ యువకుల్లారా ! మీరిది గుర్తించాలి. మీరు మీ తల్లిదండ్రుల్ని సంతోషపెడుతూ వారి సుఖజీవనానికి సహాయపడితే - ముందు ముందు మీ బిడ్డలు కూడా మీతో మంచిగా ప్రవర్తించి మీ సుఖాలకు దోహదపడతారు. మీరు మీ తల్లి దండ్రుల్ని కష్టపెడితే దాని పరిణామం చాలా భయంకరంగా ఉంటుంది. ఎవరు ఎలా చేస్తే వారికి అలాంటి ఫలితమే దక్కుతుంది. ఇందుకు చరిత్రే సాక్ష్యం. ఢిల్లీ సింహాసన చరిత్రను చూడండి. బైరంఖాన్‌ను అక్బర్, అక్బరును జహంగీర్ జహంగీర్‌ను షాజహాన్, షాజహాన్‌ను ఔరంగజేబు పెట్టిన కష్టాల కారణంగా మొగల్ సామ్రాజ్యమే ఢిల్లీకి దూరమై పోయింది !

ఈ ఉపనిషత్ సందేశం చూడండి.

పితృదేవోభవ ॥ - తై. శిక్షావల్లీ 11-2. తండ్రిని దేవునిగా భావించు. ఆయన్ని ఆదరించు. నేటికాలంలో ప్రజలు తల్లి దండ్రులకు శ్రాద్ధం పెడుతున్నారు. ఆశ్రాద్ధం ఎలాంటిది !

"జీవిత బాప సే దంగమ దంగా
పరే హుయే కో పహుంచానే గంగా"

తండ్రి బ్రతికి ఉన్నప్పుడు రోజూ తగాదాయే. చనిపోగానే గంగాజలం తర్పణం చేయడం - ఇది పితృభక్తి కాదు. తల్లిదండ్రులు జీవించి ఉన్నప్పుడే వారికి శుశ్రూషలు చేయాలి. వారి ఆశయాల్ని వ్రతాల్ని పూర్తిచేయడం బిడ్డల విధి. వేదోక్తమైన "అనువ్రతః" అనేశబ్దాన్ని ధ్యానంలో ఉంచుకొని, తండ్రి చేస్తున్న పుణ్యకార్యాల్ని, ఆచరిస్తున్న సదాచారాల్ని బిడ్డలు అనుసరించాలి. అయితే తండ్రి మద్యపానం చేసినా, సిగిరెట్లు త్రాగినా అలాంటి దురభ్యాసాల్ని పిల్లలు అనుకరించకూడదు. దుస్సంగ ప్రభావం వల్ల తండ్రి జారుడు (వ్యభిచారి), చోరుడు (దొంగ) వంచకుడైతే, అలాంటి దుర్వ్యసనాల్ని, దురాచారాల్ని పిల్లలు అనుకరించకూడదు. ఒకవేళ తండ్రి - అధర్మా చరణాన్ని ప్రోత్సహించినప్పటికి వాటిని పిల్లలు పాటించకూడదు. తండ్రి అధర్మవర్తనుడైనా భోజన, ఆచ్ఛాదనాలకు అధికారి అవుతాడు.

పుత్రుడు తల్లికి సేవ చేసేవాడు కావాలి :-

2. **మాతా భవతు సమ్మనాః** :- పుత్రుడు మాతృమూర్తి ఎడల ప్రేమతో వ్యవహరించాలి. మనుమహర్షి ఏమంటున్నాడో చూడండి.

యంమాతా పితరౌ క్లేశం సహేతే సంభవే నృణామ్।
న తస్య నిష్కృతిః శక్యాకర్తుం వర్ష శతైరపి ॥

మను. 2-227

బిడ్డల్ని కనడంలో (గర్భధారణ - ప్రసవవేదన - పాలన - పోషణ, విద్యా శిక్షణ మొదలైన వానిలో) తల్లి దండ్రులనుభవించే కష్టాలకు, బాధలకు శత జన్మలలో కూడ పుత్రులు బదులు తీర్చుకోలేరు. మహాభారతంలో యక్ష - యుధిష్ఠిర సంవాదం ద్వారా గూడ మాతృ మహత్త్వము తెలిసికొనగలం.

యక్షుడు :- ధర్మరాజా ! కింస్విద్ గురుతరం భూమేః ॥ - మ.భా వనపర్వం. 313-59
భూమికంటే గురుతరమైనదేది ?
ధర్మరాజు :- మాతాగురుతరా భూమేః ॥ -
తల్లియే భూమికంటే బరువైనది (గొప్పది)

నేటి వైజ్ఞానికులు భూమిని తూచగలిగారు. కాని తల్లి యొక్క హృదయాన్ని తూచలేకపోయారు. బిడ్డల విషయంలో తల్లి హృదయ మందున్న భావాలెటువంటివో ఈ చారిత్రక ఘటన వలన తెలియగలం.

మాతృఋణాన్ని తీర్చుకోవాలనే ఉద్దేశ్యంతో వీరబలుడు (అక్బర్ ఆస్థానంలో మంత్రి) ఒక లక్ష రూపాయలు ఒక సంచిలో పోసి తల్లి పాదాల వద్ద ఉంచి ఇలా అన్నాడు. "అమ్మా, ఈ ధనం ఎంతైనా దానం చేయి - దానితో నా మాతృఋణం తీరిపోతుంది." ఇలా కొన్ని రోజులు చెప్పనిచ్చి ఒకనాడు తల్లి అన్నది. "నాయనా, నిజంగా నీవు నా ఋణం తీర్చుకోదలచితే ఒక రాత్రి నా ప్రక్కలో నాతో పాటు పడుకో అన్నది. పుత్రుడు తల్లి మంచం మీద పడుకోడానికి అంగీకరించాడు. ఆ రాత్రి పడుకొన్నాడు. వీరబలునికి నిద్రరావడం మొదలుకాగానే - తల్లి లేపి నాయనా దప్పిక అవుతున్నది మంచినీళ్ళు త్రాగించుమని కోరింది. వీరబలుడు సంతోషంగా లేచి మంచి నీటి గ్లాసును తల్లికందించాడు. తల్లి ఒకటి రెండు గుటకలు వేసి తక్కిన జలాన్ని మంచం మీద దొర్లించగా పడకంతా తడిసిపోయింది. ఇది చూచి వీరబలున్నాడు "అమ్మా నీవేమి చేశావు ? నాయనా పొరపాటయినదని తల్లి జవాబిచ్చింది. మరల వీరబలుడు గురకలు పెట్టి నిద్రపోసాగాడు. అప్పుడు తల్లి అతనిని లేపి దప్పికయినది నీళ్ళవ్వమని అడిగింది. 'అమ్మా' నీవిప్పుడే కదా నీళ్ళు త్రాగినది, ఇంతలోనే దప్పికయినదా, నూనె పదార్థం తిన్నావా అని అడిగి లేచి మంచినీళ్ళతో నిండిన గ్లాసునందించాడు. మొదటి లాగానే తల్లి ఏకొంచెమో నీరు త్రాగి తక్కిన నీటిని మంచం మీద దొర్లించింది. విసుగుతో 'అమ్మా - నీవేమి చేశావు - ప్రక్క అంతా నీటితో తడిపి వేశావే' అని అన్నాడు. 'బిడ్డా - చీకటిలో గ్లాసు చేతినుండి జారిపోయినదని అమ్మ అన్నది. వీరబలుడు మౌనం వహించి మరల పడుకున్నాడు. వెంటనే గాఢనిద్రలోకి పోయాడు. మరలా లేపి తల్లి నీళ్ళు కావలెనన్నది. ఈసారి వీరబలునికి కోపం తీవ్రంగా వచ్చింది. 'అమ్మా - నన్ను నిద్రపోనిస్తావా లేదా? దప్పిక దప్పిక అని మాటిమాటికి నన్నెందుకు లేపుతావు.' తల్లి మొదటి లాగానే నీళ్లు కొంచెం పెదవులకు తాకించి మరల తక్కిన నీటిని ప్రక్క మీద పోసింది. ఇప్పుడు వీరబలుడు సహించలేక మహా కోపంతో ఇట్లన్నాడు - 'నీ బుద్ధి పని చేయడం లేదా? అప్పుడు తల్లి అన్నమాటలు - 'బిడ్డా ! చాలు చాలు నీవునా ఋణాన్ని తీర్చుకొన్నావు. నీవు తల్లి ఋణాన్ని తీర్చుకోగలవా? నీతల మీద ఎన్ని వెంట్రుకలున్నాయో, అన్ని జన్మలెత్తి నిరంతరం సేవ చేసినా తల్లి ఋణాన్ని తీర్చుకోలేవు ఎందుకని? విను, నీకు చెబుతాను.

నీవు నాగర్భంలో ఉన్నావు. ప్రసవించే రోజులు దగ్గరకు వచ్చాయి. నాగర్భంలో ఉన్న శిశువు బాలుడా, బాలికా అని జ్యోతిష్కుల నడిగాను. అందరు ఒకే స్వరంతో 'పిల్లవాడే' నన్నారు. అయితే నా పిల్లవాడు ఏమి కాగలడు ? అని అడిగాను. దీనికి ఒక జ్యోతిష్కుడన్నాడు. ''నీకు రాత్రి మొదటి జాములో ప్రసవమైనట్లయితే ఆ పిల్లవాడు నగరానికి కావలివాడుగా ఉంటాడు. రెండవ జామున ప్రసవమైతే నగర కారాగారానికి నౌకరవుతాడు. మూడవ జామున ప్రసవమైతే మంత్రి కాగలడు. రాజు అనిపించుకుంటాడు. నాల్గవ జామున ప్రసవమైతే, మహారాజు కాగలడు అన్నాడు. నాకు ప్రసవ సమయం సమీపించగానే పరమేశ్వరునితో 'ఓ భగవంతుడా' నాకు మొదటి జాము, రెండవ

జాములో ప్రసవం కాకుండా చేయమని ప్రార్థించాను. మొదటి జామున ప్రసవం జరుగలేదు. కాని రెండవ జాములో ప్రసవవేదన ప్రారంభమయింది. నాకాళ్ళను పైకెత్తి తాడుతో బంధించి మచ్చుకు వ్రేలాడేట్లు చేసితిని. నొప్పులు అధికమైనాయి. ఆబాధలతోనే రెండవ జాము గడిచిపోయింది. కాని వేదన భరించరానిదయినిది. ప్రాణాలు కంఠం వరకు వచ్చినాయి. విపశురాలనై మూడవ జామున నిన్ను కంటిని. దాని ఫలితంగానే నీవు మంత్రివయ్యావు. రాజు అని పిలువబడుతున్నావు. ఇప్పుడు నీవే చెప్పు - నీనిచ్చిన ఈబిల్ల పెంకులతో నాఋణం తీరిపోయిందా !

నీవు పసిబాలుడివి. ప్రక్కమీద మల మూత్రాలు విడిచేవాడివి. నీ ఉచ్చగుడ్డలు తీసి నాపాడి గుడ్డలతో నిన్ను కప్పి, నీతడిసిన గుడ్డలను నా క్రింద వేసికొని నిన్ను నిద్రబుచ్చేదానిని. ఒకరోజు కాదు వారం కాదు, మాసం కాదు, పరుసగా కొన్ని సంవత్సరాల వరకు - అంటే నీవు స్వయంగా పడుకోగలిగే వరకు ఇలా సేవ చేస్తూ ఉన్నాను. నీవైతే రెండు మూడూ సార్లు ప్రక్క తడిసిపోయినందుకే - అదీ నీటితో, ఆవేశ పడ్డావు గాబరా పడ్డావు ! వీరబలుడు సిగ్గుపడి తల్లి చరణాలపై వ్రాలి ! అమ్మా, నీవు ధన్యురాలవు. నీకు ఋణం చెల్లించడం అసాధ్యం' అన్నాడు. ఇట్టి మమతానురాగమూర్తి అయిన తల్లికి పుత్రుడు ప్రేమతో, భక్తితో సేవ చేయాలి. పొరపాటున కూడా ఎప్పుడూ ఆమెతో కఠోరంగా మాట్లాడ కూడదు.

మాతృదేవతకు పుత్రుడు చేయవలసిన కర్తవ్య కర్మను గురించి మహాభారతం శాంతి పర్వంలో ఇలా చెప్పబడింది.

"పాలన - పోషణ చేసి శిక్షాదీక్షలు కల్పించడం ద్వారా తండ్రి ధర్మ స్వరూపుడు. శరీరం మొదలైనవన్నీ తండ్రి నుండే కుమారునికి సంక్రమిస్తాయి. అందువలన సదా పుత్రుడు తండ్రి ఆజ్ఞను పాలించేవాడుగా ఉండాలి. తండ్రి మాటలు విని ఆచరించేవాడు సర్వపాప విముక్తుడౌతాడు.

తల్లి, బిడ్డల శరీరానికి కారణభూతురాలు. తల్లి ఉన్నప్పుడే పుత్రుడు సనాథుడవుతాడు లేకుంటే అనాథుడే. మాతృభక్తి గల పుత్రునికి, దారిద్ర్య దుఃఖం కాదు. తల్లి వలె బిడ్డల దుఃఖాన్ని తొలగించేవారు మరెవ్వరూ లేరు. అందువలననే ఆమెకు మాత, జననీ, ధాత్రీ, అమ్మ, వీరసూ, శుశ్రూ అనే నామాలున్నాయి. ఆమె చేసే ఉపకారాలు అగణనీయాలు. అందువలన తల్లి విషయంలో స్నేహం, భక్తి, వినమ్రతలను చూపించాలి.

మహాభారతం - అనుసాసన పర్వంలో మాతృభక్తిని గురించిన వర్ణన ఉంది. "తల్లిదండ్రులను సేవా శుశ్రూషలు, ఆదర సత్కారాలు చేయక, వారినెల్లప్పుడు కష్టపెట్ట బిడ్డలు పశుజన్మనెత్తి గాడిదగానో, కుక్కగానో, లేక పిల్లిగానో జన్మిస్తారు."

తల్లి మహత్తు :-

పద్మపురాణంలో చెప్పబడిన విషయం గమనించండి.

సర్వతీర్థమయీ మాతా సర్వదేవ మయః పితా।
మాతరం పితరం తస్మాత్ సర్వయత్నేన పూజయేత్ ॥
మాతరం పితరం చైవయస్తు కుర్యాత్ ప్రదక్షిణమ్ ।
ప్రదక్షిణీ కృతా తేన సప్తద్వీపా వసుంధరా ॥
జామనీ చ కరౌయస్య పిత్రోః ప్రణమతః శిరః
నిపతన్తి పృథివ్యాం చ సోఽక్షయం లభతే దివమ్ ॥ - పద్మపురాణం సృష్టి 47-12-24

1. తల్లి సర్వతీర్థ స్వరూపురాలు. తండ్రి సర్వదేవతా స్వరూపం. అందువలన అన్ని విధముల ప్రయత్నించి తల్లిదండ్రులను పూజించాలి.

2. తల్లిదండ్రులకు ప్రదక్షిణము చేసిన పుత్రుడు సప్త ద్వీపయుక్త సమస్తపృథివికి ప్రదక్షిణ చేసిన వాడవుతాడు.

3. తల్లిదండ్రులకు ప్రణామం చేసేటపుడు ఏబిడ్డల మోకాళ్ళు, శిరస్సు, భూమిని స్పృశిస్తాయో వారికి అక్షయ స్వర్గం లభిస్తుంది.

భారతీయశాస్త్రాల్లోని ఈ ఉపదేశ రత్నాలు అన్యమత గ్రంథాల వరకు వ్యాపించినవి. బైబిల్ ఇలా ఉన్నది.

అన్య మత గ్రంథాలు కూడా తల్లిదండ్రుల సేవను గురించి నొక్కి చెప్పాయి :-

"Honour thy father and mother and he that curseth father or mother, let him die the death"
-Sr. Matthew 15-4

"తల్లితండ్రులను గౌరవించుము. సత్కరించుము. తల్లిదండ్రులను అవమానపరచువాడు చనిపోవడం మంచిది." కురాన్‌లో వ్రాయబడినది చూడండి.

"ఓ మానవుడా నీ తల్లిదండ్రులను గౌరవించి ఆదరించుమని అల్లా నిన్ను ఆజ్ఞాపించుచున్నాడు. తల్లిదండ్రులలో ఎవరైనా వృద్ధులయినపుడు వారిని ఆదరించడం బెదిరించడం చేయవద్దు. వారిని మధురమైన మాటలతో పలుకరించుము. వినమ్రభావంతో మృదువుగా వారి ఎదుటవంగి ఇట్లనుము. - ఓ అల్లా ! ఈ తల్లిదండ్రులు నా బాల్యంలో నన్నేవిధంగా పాలించి పోషించారో, అదేవిధంగా వీరి మీద దయజూపుము"
- సూరత్ బనే ఇజరాయిల్ 23-24

ఒకసారి మహమ్మద్ సాహెబ్ గారిని ఎవరో అడిగారట - జనాబ్, ప్రపంచంలో మనం ఎక్కువగా గౌరవించవలసిన వారెవరు? జనాబ్ : మాతృదేవి. మరలా అడిగినా అదే జవాబు. మూడవసారి అడిగినా అదే జవాబిచ్చారట. మాతృదేవి తరువాత గౌరవించదగిన వారెవరని అడగ్గా పితృదేవులు - తండ్రిగారని జవాబిచ్చారట.

తల్లిదండ్రులకు సేవచేసే సందర్భాన్ని ట్రిన్ ఎడ్వర్డ్స (Tryn Edwards) ఎంత ముచ్చటగా చెప్పాడో చూడండి.

"Honour thy parents, those that gave thee birth and watched in tenderness thine earliest days, and trained thee up in youth, and loved in all, honour, obey and love them, it shall fill their souls with holy joy, and shall bring down God's richest Blessings in thee and in days to come thy children shall honour thee and fill thy life with peace"

"నీకు జన్మనిచ్చిన తల్లిదండ్రుల్ని ఆదరించు. బాల్యంలో వారు నిన్ను అతి ప్రేమతో పాలించి పోషించారు. యువకుడుగా ఉన్నప్పుడు నీకు విద్యాబుద్ధలు నేర్పారు. అన్ని సమయాల్లో నిన్ను ప్రేమతో కాపాడి పెద్దజేశారు. కాబట్టి నీవు కూడ వారిని ఆదరించాలి. వారి ఆజ్ఞల్ని పాలించాలి. కృతజ్ఞతా పూర్వకంగా ప్రేమతో శుశ్రూషలు చేయాలి. ఇలా చేయడం వలన

వారి హృదయం పరమానందభరితమౌతుంది. మిమ్ముల్ని ఆపరమేశ్వరుడు ఎల్లప్పుడు రక్షించునట్లు ప్రార్థన చేస్తారు. అదే అమూల్యమైన వరం మీకు. ఇంతేగాక మీ భావి జీవితంలో మీ సంతతి వారు కూడా మిమ్ముల్ని ఆదరించి ఆనందంతో సేవ, శుశ్రూషలు చేస్తారు. మీ జీవితం ప్రశాంతంగా ఆనందమయంగా గడిచిపోతుంది."

ఎంత మంచి ఉపదేశాలివి ? ప్రతిబాలుడు, బాలికపై ఉత్తమ సందేశ కర్తవ్యాన్ని ధ్యానంలో ఉంచుకొని ఆచరించాలి. తల్లిదండ్రుల్ని ఆదరించి, సత్కరించే బిడ్డలు ధన్యులు.

తల్లిదండ్రుల్ని ఎదిరించి, వారిని దుఃఖ పెట్టే పుత్రులు, పుత్రికలు యఫ్‌రెండోల్ఫ్ (F.Randolph) గారిచ్చిన సందేశాన్ని ఎల్లప్పుడు గుర్తుంచుకోవాలి.

"Whosoever makes his father's heart bleed shall have a child that will revenge that deed"

"ఏ బిడ్డలు తమ తల్లిదండ్రుల్ని దుఃఖపెడతారో, వారి హృదయాన్ని గాయపరుస్తారో, వారిని కూడ అలాగే దుఃఖ పెట్టే బిడ్డలు వారికి కలిగి బదులు తీర్చుకుంటారు."

తల్లిదండ్రుల సేవ ఎంతటి మహిమాన్వితమైందో ఒక కథ :-

ఈ సందర్భంలో, తల్లిదండ్రుల సేవ ఎంతటి మహిమాన్వితమైందో, ఎంతటి ఉత్తమ ఫలితాన్నిస్తుందో ఇక్కడ ఒక కథను చెప్పుకవడం ఉచితంగా ఉంటుంది.

మహారాష్ట్ర దేశంలో ఒక నగరం, ఆ ణగరంలో ఒక మందిరం ఉంది. దానికి విష్ణు మందిరమని పేరు. మరాఠీభాషలో "విరు" మందిరం అంటారు. ఈ మందిరంలో విష్ణుమూర్తి విగ్రహంతో పాటు, వేరే గదిలో వృద్ధ దంపతుల విగ్రహాలు, మరొక గదిలో ఒక యువ దంపతుల విగ్రహాలు ఉన్నాయి. విష్ణుమూర్తితో పాటు ఈ మూర్తులెందు కున్నాయి ? ఈ మూర్తులను ఎందుకు దర్శించాలి ? ఈ విషయం అక్కడ ప్రచురించిన పుస్తకంలో ఇలా చెప్పబడింది.

ఒక యువకుడు, ఒక యువతి (దంపతులు) కలిసి తీర్థయాత్రకు వెళ్ళారు. మార్గ మధ్యలో వారికి "రైదాసు" అనే భక్తుడు కనిపించాడు. పతృభక్త రైదాసు చేస్తున్న తల్లిదండ్రుల సేవలను చూచి ఈ యువ దంపతులు కూడ తమ తల్లిదండ్రులకు సేవచేసి తరించాలని వ్రతము పట్టారు. యాత్ర ముగించుకొని, గృహం చేరి తల్లిదండ్రులకు ఎంతో సేవ చేస్తూ ప్రసిద్ధి పొందారు.

ఒక రోజు విష్ణు దేవుడు ఈయువ దంపతుల పితృసేవకు సంతోషించి దర్శన మివ్వడానికి వచ్చాడు. ఇంటి బయట నిల్చొని వారిని పిలిచాడు. "నాకిప్పుడు తీరికలేదు. తీరిక ఉన్నపుడు బయటకు రాగలను'' అని యువకుడు జవాబిచ్చాడు. ఈ మాటలు విన్న భగవంతుడు, "విష్ణుమూర్తి నిన్ను దర్శించ డానికి వచ్చాడని మరొకరి ద్వారా కబురు పంపించాడు. ఆ మాటలు వినిన యువకుడు ఒక ఇటుకను పంపించి, ఆ ఇటుక మీద కూర్చుండుమనినాడు. అవకాశం దొరికి నపుడు రాగలను అని చెప్పి పంపాడు. కూర్చోడానికి ఇష్టముంటే కూర్చోమనుము లేకుంటే వెళ్ళమనుము అన్నాడు. విష్ణుమూర్తి ఇటుక మీద కూర్చున్నాడు. అచటి భాషలో ఇటుకను 'వీర్' లేక 'విరు' అని కూడ పిలుస్తారు.

తల్లిదండ్రుల సేవను ముగించుకొని, యువకుడు బయటికి వచ్చి విష్ణుమూర్తికి నమస్కరించగా, "ఓ భక్తుడా ! నీ పితృసేవలకు సంతసించి నీకు దర్శనమివ్వాలని వస్తే నీవింత ఆలస్యంచేసి నిర్లక్ష్యం ఎందుకు చేశావు" అని విష్ణుమూర్తి అడిగినపుడు యువకుడు ఇట్లన్నాడు. స్వామీ, మీరింత వరకు ఎప్పుడు దర్శన మివ్వలేదు. నేడు దర్శనిమివ్వడానికి కారణమేమిటి ? అన్నాడు. విష్ణువు జవాబు - 'మొదట నీవేమి పుణ్యకర్మలు చేయలేదు. కేవలం పాపమే చేశావు. కాని నీవిపుడు చేస్తున్న పుణ్యకర్మలు అనంతంగా ఉన్నాయి. అందువలన నేను తప్పక నీకు దర్శనమివ్వడానికి రావలసి వచ్చింది.' అన్నాడు. స్వామీ నేనేమీ పుణ్యకర్మలుగాని పూజావిధులుగాని, ఆరాధనలు గాని చేయలేదే. దేవాలయానికి కూడ పోలేదు. మరి మీరు తప్పని సరిగా వచ్చి దర్శిన మివ్వడానికి నేను చేసిన పుణ్యకర్మలేవి ? అన్నాడు.

విష్ణువు :- నీవు నీ తల్లిదండ్రులకు కదుశ్రద్ధా భక్తులతో సేవలు చేశావు. ఆ సేవల ఫలితమే నేను నీకు దర్శనమివ్వడానికి కారణమైంది.

భక్తుడు :- మహాదయామయా ! ఏ తల్లిదండ్రుల సేవచేయుట వలన మీరిక్కడికి రాగలిగారో ఆపితృదేవతల సేవే చేసికుంటాను. వారిని వదలి ఇతరులకు నేనేమి చేయగలను, ఇక తమరు దయచేయండి అన్నాడు. ఇదీ కథ.

పరమాత్మ సర్వవ్యాపకుడు. అణువణువునందు, కణకణమునందు వ్యాపించి ఉన్నాడు. అందువలన పరమేశ్వరుడు ఒకచోటికి రావడం గాని, మరొకచోటికి వెళ్ళడం గాని చేయడు. తల్లిదండ్రుల్ని ఆదరించుతూ వారికి సేవా శుశ్రూషలు చేయడం ద్వారా పరమేశ్వరుని కూడ మనం దర్శించ గలమని ఈ కథ వల్ల మనకు స్పష్టపడుతుంది.

.....15వ పేజీ తరువాయి

ముఖర్జీ రచన చిన్నదే. అయినా దేశంలో పెద్ద సంచలనం రేపింది. హిందూ మతాభిమానం, సనాతన ధర్మం పట్ల విశ్వాసంగల వారందరూ ఉలికిపడి, అది గుర్తు చేసిన అంశాలను ఆలోచించటం మొదలెట్టారు. 1909 అక్టోబరులో ముఖర్జీ పత్రికా వ్యాసావళి పుస్తకంగా వెలువడింది. బెంగాలీలో దాని సంక్షిప్త రూపాన్ని అనువదించి, యాభైవేల ప్రతులను ఉచితంగా పంచారు. ఇంగ్లీషు మూలమైతే భారతదేశమంతటా మేధావి వర్గాల్లో చర్చనీయాంశమైంది. పొంచి ఉన్న ప్రమాదాన్ని నిరోధించడం ఎలాగన్న ఆందోళన అన్ని వర్గాల్లో, అన్ని ప్రాంతాల్లో రేకెత్తింది.

ముఖ్యంగా పంజాబ్‌లో అప్పటికే 'పంజాబీ' పత్రికలో వరస వ్యాసాల్లో లాలా లాల్‌చంద్ వంటి విజ్ఞులు వెలిబుచ్చిన భయాందోళనలను ముఖర్జీ రచన ధ్రువీకరించింది. బెంగాల్‌లో జరిగిందే తమకూ జరిగి ముస్లిందలి పైచేయి అయితే తమ రాష్ట్రాల్లో తమ స్థితి ఏమిటన్న పునరాలోచన అన్ని రాష్ట్రాల్లోని మేధావి వర్గాల్లో మొదలైంది. పరిస్థితి చేయిజారక ముందే ఏదో ఒకటి చేయాలన్న ఆతురత ఆర్య సమాజికులకు కలిగింది. అది పంజాబ్‌లో చరిత్రకెక్కిన 'శుద్ధి',కి దారి తీసింది.

1910-11లో పరిమితంగా పంజాబ్‌లో మొదలైన 'శుద్ధి', స్వామి శ్రద్ధానంద చేతిలో పద్ధాక మహోద్యమంగా రూపుదాల్చింది. చివరికి అదే ఆయన ప్రాణాన్ని బలితీసుకుంది.

ఆర్య సమాజము న్యూబోయిన్‌పల్లి

(ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర-తెలంగాణ అనుబంధ శాఖ)

సికింద్రాబాద్ ఆధ్వర్యంలో

గాయత్రి మహా యజ్ఞము

అందరికి సాధరణ ఆహ్వానము

141 (నూట నలుబై ఒక్కటవ) ఆర్య సమాజ స్థాపన 8వ గాయత్రి మహా యజ్ఞము ప్రాతఃకంబ 6.00 గంటల నుండి సాయంత్రం 6.00 గంటల వరకు నిరంతరం ఏప్రిల్ 8-4-2016 శుక్రవారము రోజున

ఈ దినము మీరు ఎంత బీజీగా ఉన్న కూడా కానీ సంత్ కనీసం ఒక మూడు ఆహుతులు ఇవ్వడానికి సమయం కేటాయించి ఈ కార్యక్రమ శోభను పెంచగలరు ప్రార్థన.

ప్రెసిడెంట్	ట్రెజరర్	సెక్రటరి
వరుణ్‌రాజ్	**అంజిరెడ్డి**	**బృహస్పతి**

ఆర్యసమాజ్ న్యూ బోయిన్‌పల్లి, పెద్దతోకట్ట, సికిందరాబాద్.

సెల్ నెం. : 9652669732.

आर्यसमाज न्यू बोइनपल्ली, सिकन्दराबाद

''आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना'' से अनुबंधित ।

के तत्तवादान में

गायत्रि महा यज्ञ

में आप सभी आमंत्रित है

141वे आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर दिनांक 08-04-2016 शुक्रवार के दिन प्रातः 6.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक गायत्रि महा यज्ञ का आयोजन किया जा रहा है । सभी से निवेदन है कि इस यज्ञ में कम से कम तीन-तीन आहुतिया देकर पुण्य के भाग्य बने और कार्यक्रम को सफल बनाए ।

प्रधान	कोषाध्यक्ष	मंत्री
वरणराज	**अन्जिरेड्डी**	**बृहस्पति**

आर्यसमाज न्यू बोइनपल्ली, पेद्दातोकट्टा, सिकन्दराबाद, **सेल नं : 9652669732**

मजहब क्यों बने फिजूल का अड़ंगा ?

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

आज ऐी दो घटनाएं सामने आई, जिनसे पता चलता है कि मज़हब या धर्म या संप्रदाय को फिजूल ही अड़ंगा बनाया जाता है । ये दो घटनाएं हैं, केरल और मेरठ की ! केरल के एक महिला कालेज में हिंदू लड़की नीरजा पढ़ती है । इस कॉलेज को 'मुस्लिम एजुकेशन सोसायटी' चलाती है । इस कॉज ने नीरजा का कालेज में आना इसलिए बंद कर दिया है कि उसने मुहम्मद रमीज़ नामक एक लड़के से शादी कर ली है । यह शादी दोनों ने कोर्ट में की है, क्योंकि दोनों के माता-पिता असहमत थे । दोनों ने शादी तो की है लेकिन दोनों में से किसी ने अपना मजहब नहीं बदला है । आश्चर्य है कि एक हिंदू लड़की, एक मुसलमान के घर में बैठ गई, इसका विरोध एक मुस्लिम कॉलेज कर रहा है । कॉलेज मुसलमानों का है तो न्हें खुश होना चाहिए कि उनकी एक संख्या बढ़ी । लेकिन वह खुश नहीं हैं । शायद इसलिए कि उस लड़की ने अपना धर्म नहीं बदला । वह हिंदू ही रही । इससे भी बड़ा कारण यह हो सकता है कि कालेज के संचालक डर गए हों । उन्हें लग रहा हो कि उनके कालेज की एक हिंदू लड़की यदि मुसलमान के घर बैठ गई तो कहीं केरल के हिंदू उन पर टूट न पड़ें । उनके कॉलेज में पढ़ रही सारी हिंदू लड़कियों के माता-पिता उनको कॉलेज से निकाल न लें । कारण जो भी हो, नीरजा और रमीज़ ने जो किया, उससे यह सिद्ध होता है कि मजहब या धर्म के मुकाबले प्रेम बड़ी चीज है । जिसने शुद्ध प्रेम का प्याला पिया हो उसके लिए मजहब क्यो चीज है ? वह धावक मंदिर और मस्जिद की उंची से उंची दीवारों को पलक झपकते ही लांघ जाता है । उसके सामने सारी सृष्टि एक खिलौना बन जाती है । दोनों प्रेमी एक-दूसरे के मजहब का सम्मान करते हैं लेकिन उन्हे वे अपने रास्ते का कांटा नहीं बनने देते । ऐसे लोग ही सच्चे धार्मिक होते हैं . वह धर्म ही क्या है, जो इंसान और इंसान में फर्क पैदा कर दे ? यही बात मेरठ में भी देखने में आई । मेरठ में एक अँधविद्यालय है, उसमें ७ साल की एक बच्ची, रिदा ज़ेहरा, पढ़ती है । वह देख नहीं सकती, लेकिन सुन सकती है और बोल सकती है । उसने सुन-सुनकर गीता के श्लोक इस तरह रट लिये हैं, जैसे कि वह उहें पढ़कर सुना रही हो । उसके अध्यापक प्रवीण शर्मा ने उसे एक श्लेक-वाचन प्रतिस्पर्था के लिए तैयार किया था । रिदा जेहरा से जब किसी ने पूछा कि तुम अल्लाह को मानती हो या भगवान को ? तो उसका जवाब था, 'मैं अंधी हूं । मैं तो उसे कभी देख नहीं पाउंगी । मैं तो उसकी इबादत (पूजा) करती हूं । गीता और कुरान दोनों पढ़कर ।' जेहरा के पिता रईस हैदर ने कहा कि 'मैं चाहता हूं कि मेरी बच्ची पढ़-लिखकर बड़ी ने । इससे क्या फर्क पढ़ता है कि वह कुरान पढ़ती है या गीता ? यदि वह दूसरे मजहब के बारे में भी जानकार है तो यह तो और भी अच्छी बात है ।' इस मामले में भी मजहब आड़े नहीं आ रहा । लेकिन हमारे मजहबीराजनीति में फंसे लोगों के लिए इंसानियत का यह मजहब बिल्कुल नागवार गुजरता है । उन्हें लगता है कि अगर लोग इसी तरह ढील लेने लगे तो हमारी दुकानों का क्या होगा ?

Dateof Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month
आर्य जीवन 18-02-2016 Registered-Reg. No. HD/783/2015-17 RNI.No.52990/93

ఆర్య జీవన్
హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
Editor: Vithal Rao Arya, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-95.
Phone No. 040-24753827, 66758707, Fax: 040-24557946
Annual subscription Rs. 100/- సంపాదకులు - విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్ సభ

To,

ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ ఆధ్వర్యములో

విద్వత్ సదస్సు

తేది :- 28-02-2016 ఆదివారము ఉదయము 10.00 గం॥ల నుండి
స్థలము :- పండిత నరేంద్ర భవనము, రాజమొహళ్ల, హైదరాబాద్.

ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ ఆధ్వర్యములో తెలంగాణ మరియు ఆంధ్ర ప్రాంతాలలో గల విద్వాంసుల సదస్సు జరుప నిర్ణయించడమైనది. ఈ సదస్సు పండిత నరేంద్ర భవనములో తేది **28-2-2016** ఆదివారము ఉదయము **10.00** గం॥లకు ప్రారంభమగును. ఇరు ప్రాంతాలలోగల విద్వాంసులందరు ఈ సదస్సులో పాల్గొని "నేటి పరిస్థితులలో ఆర్య సమాజ పాత్ర మరియు ఆర్య సమాజికుల కర్తవ్యము" అను విషయముపై తమతమ అభిప్రాయములు మరియు సూచనలు ఇవ్వగలరు. అంతరంగ సదస్యులు మరియు విశిష్టాహ్వానితులు ఈ సదస్సులో పాల్గొని సహకారాన్ని అందించగలరు. (భోజన వ్యవస్థ కలదు)

కార్యక్రమ అధ్యక్షులు : శ్రీ విఠల్ రావ్ ఆర్య, ప్రధాన్ సభ
సంయోజకులు : హరికిషన్ వేదాలంకార్ మంత్రి సభ

ధన్యవాదములు.
భవదీయులు

హరికిషన్ వేదాలంకార్
మంత్రి సభ
సెల్ : 09703066001

आर्य प्रतिनिधि सभा आँ.प्र.-तेलंगाना के तत्वावधान में

विद्वत समागम

दिनांक 28-02-2016 रविवार प्रातः 10.00 बजे से
स्थान :- पण्डित नरेन्द्र भवन, राजमोहल्ला, हैदराबाद

मान्यवर महोदय,

आर्य प्रतिनिधि सभा आँ.प्र.-तेलंगाना के तत्वावधान में प्रान्त के समस्त विद्वानों का विद्वत समागम आयोजित करने का निर्णय लिया गया है और यह समागम पंडित नरेन्द्र भवन में दिनांक **: 28-2-2016 रविवार के दिन प्रातः** 10.00 बजे से आयोजित है । आ.प्र.-तेलंगाना प्रान्त से संबधित समस्त विद्वत जनों से निवेदन है कि अवश्य इस विद्वत समागम में भाग लेकर आज की परिस्तिथि में आर्य समाज के दायित्व पर तथा समस्त आर्य जनों के दायित्व पर विचार वयक्त कर मार्गदर्शन करें। अंतरंग सभा के सभी सदस्यों एवं विशेष आमंत्रित सदस्यों से भी निवेदन है कि इस समागम में भाग लेकर सहयोग प्रदान करें । (भोजन की व्यवस्था रहेगी)

अध्यक्षताथ : विट्ठलराव आर्य प्रधान सभा
संयोजक : हरिकिशन वेदालंकार मंत्री सभा

धन्यवाद

भवदीय

हरिकिशन वेदालंकार
मंत्री सभा
मोबाईल : 09703066001

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR
Editor: Vithal Rao Arya ● acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాదు-95. Ph: 040-24753827, Email : acharyavithal@gmail.com
संपादकः श्री विट्ठलराव आर्य प्रधान सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रेस चिक्कडपल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-95.